PG HN SI-04 (DSE)

TWO YEAR POSTGRADUATE PROGRAMME

(CBCS and Accordance with NEP 2020)

हिंदी काव्यधारा

(आदिकाल और भक्तिकाल के विशेष सन्दर्भ में)

First Semester

HINDI KAVYADHARA

(ADIKAAL AUR BHAKTIKAAL KE VISHESH SANDARBH ME)

Padmanath Gohainbaruah School of Humanities

KRISHNA KANTA HANDIQUI STATE OPEN UNIVERSITY

विषय विशेषज्ञ

प्रोफ़ेसर दिलीप कुमार मेधी, हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम

प्रोफ़ेसर अमूल्य बर्मन, हिंदी विभाग, कॉटन विश्वविद्यालय (सेवानिवृत्त विभागाधक्ष्य), असम

प्रोफ़ेसर भूषण पाठक, अध्यक्ष्य, बी. एस. कॉलेज, हाउली, बरपेटा, असम

पाठ्यक्रम समन्वयक : डॉ. प्रांजल कुमार नाथ, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

एसएलएम् तैयारी टीम

Units	**Contributors**
इकाइयाँ	**योगदानकर्ताओं के नाम**
1–8	डॉ. प्रांजल कुमार नाथ, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय
9–12	डॉ. कुशल महंत, सहायक अध्यापक मरिगाँव महाविद्यालय
13–14	परीक्षित नाथ, सहायक अध्यापक, दुमदुमा महाविद्यालय

Editorial Team

Content : प्रांजल कुमार नाथ, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

Language : युगल चंद्र नाथ, सहायक अध्यापक एवं विभागाधक्ष्य, मरिगाँव महाविद्यालय, असम

Structure & Format : डॉ. प्रांजल कुमार नाथ, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

November, 2024 **ISBN :**

This Self Learning Material (SLM) of the Krishna Kanta Handiqui State University is made available under a Creative Commons Attribution-Non Commercial-ShareAlike4.0 License (International) : http.//creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0

Printed and published by Registrar on behalf of the Krishna Kanta Handiqui State Open University.

Headquarters: Patgaon, Rani Gate, Guwahati-781017
City Office: NH 37, Resham Nagar, Khanapara, Guwahati-781022 Web: www.kkhsou.in

CONTENTS

		Page No.
इकाई 1 :	**सरहपाद** सरहपाद का सामान्य परिचय, दोहाकोश: परिचय, सरहपाद का पद (मूल पाठ–जहि मण पवण ण संचरइ, अरे बढ़ सहज गइ पर रज्जह), मूल पाठ का सारांश।	7–11
इकाई 2 :	**गौरख नाथ** गौरख नाथ का सामान्य परिचय, गौरख के पद (मूल पाठ 1 से 5), पदों में निहित संवेदना।	12–15
इकाई 3 :	**विद्यापति के पद–1** विद्यापति का सामान्य अध्ययन, विद्यापति के पद (मूल पाठ– के पतिआ लए जाएत रे, सखित है, कि पुछसि अनुभव, कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि), पद का सारांश।	16–20
इकाई 4 :	**विद्यापति के पद–2** विद्यापति भक्त या श्रृंगारिक कवि, विद्यापति पद (मूल पाठ), पदों में निहित संवेदना।	21–26
इकाई 5 :	**कबीर दास–1** कबीर दास सामान्य परिचय, कबीर के पद (मूल पाठ– हम तौ एक एक करि जांनां), पद का सारांश।	27–33
इकाई 6 :	**कबीर दास–2** कबीर का समाज सुधार, कबीर–दोहा (मोकों कहाँ ढूँढ़े बंदे, संतों भाई आई ग्याँन की आँधी रे), पद का सारांश।	34–39
इकाई 7 :	**सूरदास–1** सूरदास सामान्य परिचय, मूल पाठ (भ्रमरगीत सार का पद– आयो घोष व्योपारी, जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै), पद का सारांश।	40–44
इकाई 8 :	**सूरदास–2** सूरदास की काव्यगत विशेषता, मूल पाठ (भ्रमरगीत सार का पद– आए जोग सिखावन पांड़े, ए अलि ! कहा जोग में नीको ?), पद का सारांश।	45–50
इकाई 9 :	**तुलसीदास–1** तुलसीदास सामान्य परिचय, लक्ष्मण परशुराम संवाद (मूलपाठ), पाठ का सारांश।	51–55
इकाई 10 :	**तुलसीदास–2** तुलसीदास की भक्ति भावना, उत्तराकांड (मूल पाठ), पाठ का सारांश।	56–62
इकाई 11 :	**मीराबाई–1** मीरा–सामान्य परिचय, मीरा की पदावली (मूल पाठ– मेरे तो गिरिधर गोपाल), पाठ का सारांश।	63–67

इकाई 12 : मीराबाई पदावली-2 **68-71**

मीरा की भक्ति भावना, मीरा की पदावली (मूल पाठ), पाठ का सारांश।

इकाई 13 : जायसी-1 **72-77**

मलिक मुहम्मद 'जायसी' का सामान्य परिचय, पद्मावत, नागमती वियोग खंड (मूल पाठ-कहा मानसर चढ़ा सो पाई..),पाठ का सारांश।

इकाई 14 : जायसी-2 **78-83**

जायसी विरह वर्णन की विशेषता, नागमती वियोग-खंड (मूल पाठ- नागमती चितउर पथ हेरा, पिउ बियोग अस बाउर जीऊ), उल्लेखित पंक्तियों का भावार्थ।

विषय परिचय

स्नातोकत्तर हिंदी प्रथम छमाही के यह, पहला वैकल्पिक विषय का पाठ्यक्रम है। हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल और भक्तिकाल का विशेष महत्व रहा है। इसके अन्तर्गत शिक्षार्थी के विषय ज्ञान के लिए हिंदी साहित्य के इतिहास से संबंधित आदिकाल और भक्तिकाल के एकाध सुप्रसिद्ध कवि की कविताएँ, पद और दोहें को संकलित किया गया है। इसमें निहित संवेदनाओं का भावात्मक तथा कलात्मक अध्ययन द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम शिक्षार्थियों को अपनी जिज्ञासा दूर करने में सक्षम बनाएगा। सहज-सरल भाषा में लिखित शिक्षार्थी उपयोगी प्रस्तुत पाठ्यक्रम तत्कालीन परिवेश, समाज-संस्कृति, धर्म, सदाचार, नैतिकता बोध, आध्यात्मिक चेतना आदि पर विचार प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में कुल चौदह इकाईयाँ हैं। प्रत्येक इकाई में मूल पाठ के साथ-साथ रचनाकारों का सामान्य परिचय, उनकी जीवन दृष्टि एवं साहित्य संसार को शामिल किया गया है।

हर इकाई का शीर्षक कवि के नाम के अनुसार रखा गया है। हिंदी साहित्य का स्वरूप बहुत ही व्यापक तथा तत्कालीन कवियों, साहित्यकारों के विचार-संसार बहुत अधिक विशाल हैं। तो, उन विशाल भंडारों में से थोड़े बहुत चुनकर पाठ्यक्रम में शामिल करना काफ़ी चुनौती और तनाव भरा कार्य रहा है। फिर भी कौशिश यह है कि शिक्षार्थियों को इस पाठ्यक्रम अंतर्गत जो भी पढ़ने को अथवा सिखने को दिया जाए, ये सब उनके लिए बहुत मूल्यवान सिद्ध होंगे। उनके लिए ये अनमोल निधि होगी और इन से काफी कुछ सिखने को मिलेगा। पाठ्यक्रम में शामिल कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीय तथा भावात्मक, सांप्रदायिक सौमनस्य, देश-प्रेम की भावना, त्याग, बलिदान, स्वतंत्रता के लिए उत्तेजित करने वाली वीरोचित तथा काल्पनिक चिंतन, अध्यात्मवादी सोच, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, धार्मिक तथा सांस्कृतिक सद्भावना, मानवता और अनेकता में एकता के संदेश को प्रमुखता दी गयी हैं । शिक्षार्थी को इससे भिन्न प्रकार के रसास्वादन प्राप्त होंगे।

पाठ्यक्रम में-उल्लेखित चौदह इकाइयों में से प्रथम का शीर्षक है 'सरहपा'। इसमें 'सरहपाद' के 'दोहे' के कुछ चुनिंदा अंश उपलब्ध हैं। 'सरहपाद' हिंदी के प्रथम कवि होने के नाते, यहाँ सबसे पहले उनके दोहे को रखा गया है। इकाई में दूसरा शीर्षक है 'गोरखनाथ'। इसमें गुरु गोरख नाथ के पदों को रखा गया है। नाथ संप्रदाय से जुड़े गोरख के काव्य-रस से शिक्षार्थी तत्कालीन धार्मिक एवं आध्यात्मिक स्थिति का परिचय प्राप्त करेंगे। तीसरी और चौथी इकाईयों में क्रमश: 'विद्यापति के पद-1' और 'विद्यापति के पद-2' नामक दो अलग-अलग शीर्षक हैं। जिसमें विद्यापति के कुछ चुनिन्दा पद शामिल हैं। पद के साथ-साथ प्रस्तुत इकाई में विद्यापति के भक्त और श्रृंगारिक होने के मतों पर भी विचार रखा गया है। पाँचवी और छठवीं इकाईयों को 'कबीर के (पद)-1' और 'कबीर के (दोहे)-2' शीर्षकों में रखा गया है। सातवीं और आठवीं इकाईयों में भ्रमरगीत को शामिल किया गया है। इसमें भक्ति साहित्य के प्रसिद्ध कवि सूरदास के भ्रमरगीत से सम्बन्धित पदों को रखा गया है, जिससे विद्यार्थियों को भ्रमरगीत के बारे में पढ़ने तथा जानने के अलावा उसमें निहित विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त होंगे । नौवीं इकाई में तुलसी के पद को रखा गया है जिसका शीर्षक है- 'तुलसीदास-1'। इकाई संख्या दसवीं में भी तुलसीदास के भक्ति संबंधी पदों को तथा उसमें निहित भावों को विस्तारित रूप प्रस्तुत किया गया है और शीर्षक का नाम दिया गया है 'तुलसीदास-2'। ग्यारहवीं और बारहवीं इकाईयाँ मीराबाई से संबंधित हैं। मीराबाई से संबंधित इन पदावली को 'मीराबाई (पदावली)-1' और 'मीराबाई (पदावली)-2' शीर्षकों में रखा गया है। तेरहवीं और चौदहवीं इकाईयों में 'जायसी' लिखित प्रेमकाव्य के चुनिंदा अंशों को शामिल किया गया है। जिसे 'जायसी-1' और; जायसी-2' शीर्षकों में क्रमानुसार रखा गया है।

इकाई 1 : सरहपाद

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 सरहपाद का सामान्य परिचय

1.4 दोहाकोश: परिचय

1.5 सरहपाद के पद (मूल पाठ)

1.6 मूल पाठ का सारांश

1.7 अधिक जानने के लिए पढ़े

1.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

1.9 अभ्यास प्रश्न

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- सरहपा के जीवन और साहित्य से परिचय प्राप्त करेंगे।
- सरहपा कृत दोहाकोश से परिचित हो सकेंगे
- दोहाकोश में अभिव्यक्त सरहपा के चिन्तन से साक्षात्कार कर सकेंगे।

1. 2 प्रस्तावना

सरहपा को पंडित राहुल सांकृत्यायन हिन्दी के प्रथम कवि मानते हैं। उन्होंने सरहपा के जिन 7 संस्कृत ग्रन्थों और 17 अनूदित अपभ्रंश ग्रन्थों का उल्लेख किया है, अथवा जिसको आधार मानकर सरहपाद को प्रथम कवि स्वीकार किया है, उनकी कोई भी रचना अपने मूल रूप में वर्तमान उपलब्ध नहीं है। राहुल जी ने सरहपा के 'दोहाकोश' का संपादन किया है, जिसमें 165 छंद उपलब्ध हैं। आइए, अब हम सरहपाद के बारे में जानने की कोशिश करते हैं।

1.3 सरहपाद का सामान्य परिचय

सरहपाद का समय आठवीं शती माना जाता है। उनके जन्म-स्थान को लेकर विद्वानों में मतभेद है। एक तिब्बती जनश्रुति के आधार पर उनका जन्म-स्थान उड़ीसा माना गया है। अन्य एक जनश्रुति, सहरसा ज़िले के पंचगछिया ग्राम को भी उनका जन्म-स्थान बताया जाता है। महापंडित राहुल सांकृत्यायन जी ने उनके निवास स्थान नालंदा और प्राच्य

देश की राज्ञीनगरी दोनों ही बताया है। उन्होंने दोहाकोश में राज्ञीनगरी के भंगल (भागलपुर) या पुंड्रवर्द्धन प्रदेश में होने का अनुमान किया। अत: सरहपा को कोसी अंचल के कवि माने जा सकते हैं। सरहपा को चौरासी सिद्धों की प्रचलित तालिका में छठा स्थान प्राप्त है। उनका मूल नाम 'राहुलभद्र' था और उन्हें 'सरोजवज्र', 'शरोरुहवज्र' तथा 'पद्मवज्र' आदि नामों से भी जाने जाते थे। वे पालशासक धर्मपाल (770-810 ई.) के समकालीन थे। उनको बौद्ध धर्म की वज्रयान और सहजयान शाखा के प्रवर्तक तथा आदि सिद्ध माने जाते हैं। सरहपा ब्राह्मणवादी वैदिक विचारधारा के विरोधी और विषमतामूलक समाज के विपरीत सहज मानवीय व्यवस्था के समर्थक थे।

प्रमुख कृतियाँ : तिब्बती ग्रंथ स्तन्-ग्युर में सरहपा की 21 कृतियाँ संग्रहीत हैं। इनमें से 16 कृतियाँ अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी में हैं, जिनके अनुवाद भोट भाषा में उपलब्ध हैं। यथा-

दोहा कोश-गीति
दोहाकोश नाम चर्यागीति
दोहाकोशोपदेश गीति
दोहा नाम
दोहाटिप्पण
कायकोशामृतवज्रगीति
वाक्कोशरुचिरस्वरवज्रगीति
चित्तकोशाजवज्रगीति
कायवाक्चित्तामनसिकार
दोहाकोश महामुद्रोपदेश
द्वादशोपदेशगाथा
स्वाधिष्ठानक्रम
तत्त्वोपदेशशिखरदोहागीतिका
भावनादृष्टिचर्याफलदोहागीति
वसंत-तिलकदोहाकोशगीतिका तथा
महामुद्रोपदेशवज्रगुह्यगीति।

उल्लेखित कृतियों में सर्वाधिक प्रसिद्धि उन्हें दोहाकोश से ही मिली हैं। उनकी अन्य पाँच कृतियाँ संस्कृत में हैं-

बुद्धकपालतंत्रपंजिका
बुद्धकपालसाधन
बुद्धकपालमंडलविधि
त्रैलोक्यवशंकरलोकेश्वरसाधन एवं

त्रैलोक्यवशंकरावलोकितेश्वरसाधन।

पंडित राहुल सांकृत्यायन जी ने इन्हें सरहपाद की प्रारंभिक रचनाएँ माना है, जिनमें से चौथी कृति के दो और अंशों के भिन्न अनुवादकों द्वारा किए गए अनुवाद स्तन्-ग्युर में शामिल हैं, जिसको स्वतंत्र कृति मानकर राहुलजी सरह की सात संस्कृत कृतियों का उल्लेख करते हैं ।

1.4 दोहाकोश: परिचय

दोहाकोश की पांडुलिपि राहुल सांकृत्यायन जी को 'तिब्बत के एक ऐतिहासिक मठ में सन् ई. 1934 में' प्राप्त हुई थी। 'दोहाकोश' में प्रयुक्त लिपि वर्तमान समय की कैथी, विदह, असमिया, बांग्ला तथा उड़िया आदि लिपियों से बहुत कुछ मिलती जुलती हैं। राहुल सांकृत्यायन जी ने जिस 'दोहाकोश' का संपादन किया उसमें 165 छंद उपलब्ध हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु



- राहुल जी का मत है कि दोहा-चौपाई की शुरुआत अपभ्रंश से हुई और 'जब तक और पुराना उदहारण नहीं मिलता, तब तक के लिए हम कह सकते हैं कि सरह ही साहित्य में इसके विधाता हैं।' परन्तु 'दोहाकोश' में सिर्फ दोहा छंद ही नहीं सोरठा, पद्धतिया आदि अन्य छन्द भी हैं। अपभ्रंश के जानकार विद्वानों का विचार है कि दोहा और चर्यापद अपभ्रंश के छन्द हैं। चर्या का अर्थ बताया जाता है- आचरण, अभ्यास और अनुष्ठान। नेपाल के बौद्धों के बारे में प्रसिद्ध है कि ये अपनी गुप्त पूजा को चर्या या चचा कहते हैं, इस पूजा में ये पद गाए जाते हैं।

इसे पढ़ने से कभी-कभी भ्रम की स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि इन कविताओं में सपाट बयानी हैं। मगर सच तो यह है कि 'दोहाकोश' में जटिल बातों को सहजता के साथ प्रस्तुत किया गया है। 'दोहाकोश' में गुरु वचन को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। इस ग्रन्थ में पाखंड और आडंबर का विरोध किया गया है।

1.5 सरहपाद के दोहे (मूल पाठ)

(1)

जहि मण पवण ण संचरइ, रवि-ससि णाहिं पवेस।।
तहि बढ चित्त विसाम करू, सरहें कहिअ उएस।।
एकक करू मा वेणणि करुखा मा करू विणणि विसेस।

एक्कें रंगे राञ्जआ, तिहुअण सअलासेस।।
आइ न अंत न मज्झ तहिंख णउ भव णउ णिव्वाण।
एहू सो परममहासुह, णउ पर णउ अप्पाण।।

(2)

अरे बढ़ सहज गइ पर रज्जह।
मा भव-गंध-बंध पहिबज्जह।।
एहू निअ मण सबल चतर स चल।
मेलहिं सहाव त्थाअ वासी दोस-णिम्मल।।
जब्बें मण अट्थमणु जाइ, तणु तुट्टइ बंधण।
तब्बें सम रसहि मज्झे, णउ सुद्द ण बाम्हण।।

शब्दार्थ : पवन-हवा, रवि-सूर्य; शशि-चाँद; भव-संसार की पीड़ा, दुःख; णिम्मल-निर्मल।



1.6 मूल पाठ का सारांश

जहाँ मन और पवन की गति नहीं है और जहाँ रवि और शशि भी नहीं पहुँच सकते, सरहपाद कहते हैं हे मुर्ख मन! तू वही स्थिर हो जा। इस ब्रह्मांड में परमेश्वर परमतत्व की सत्ता को सहजता से कोई नहीं समझ पाया है। वह न दो हैं तथा न ही विशेष दो हैं, यानि न वह अद्वैत हैं, न द्वैत और न ही वह विशिष्टाद्वैत है। तीनों लोक सम्पूर्ण रूप से उसी परम तत्व के रंग में समाये हुए हैं। इस परमपद का आदि, अंत अथवा मध्य ढूँढ पाना बिलकुल ही असंभव है । वह न उत्पन्न होता है और न ही निर्वान की अवस्था में रहता है । वह न ही दूसरों का है और न ही खुद का है। वह तो परम महासुख की अवस्था है।

मन को सरहपाद ने चंचल होने से बचाकर कह रहे हैं कि मुर्ख! तू सहज गति पर ध्यान केन्द्रित कर। सहज अवस्था प्राप्त करने पर न दुःख होता है और न ही किसी प्रकार का भय होता है। यहाँ मन को एक चंचल घोड़ा की तरह माना गया है। जब चित्त स्थिर हो जाता है, शरीर का अभिमान टूट जाता है, तब समरस के बीच पहुंचकर सहजावस्था की प्राप्ति होती है, वहाँ न ही कोई शूद्र होता है अथवा न ही कोई ब्राह्मण।



अपनी प्रगति जांचें

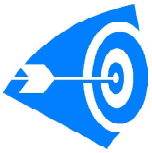
प्रश्न 1. टिपण्णी लिखिए:

क) सरहपा

ख) दोहाकोश

प्रश्न 2. चित्त स्थिर हो जाने का परिणाम क्या निकलता है?

प्रश्न 3. मन को 'चंचल घोड़ा' किसने और क्यों कहा होगा–विचार व्यक्त कीजिए?



1.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : सरहपाद का सामान्य परिचय पढ़िए।

प्रश्न 2 का उत्तर : कविता का सारांश देखिए।

प्रश्न 3 का उत्तर : मन को चंचल घोड़ा सारहपद ने कहा है, क्योंकि घोड़ा बहुत तेज दौर सकता है। दूसरी ओर चंचल होने से तो और अधिक यहाँ से वहाँ तथा वहाँ से यहाँ भागता रहेगा। चंचल घोड़ा कभी भी एक जगह स्थिर नहीं ठहरता है।

आप अपने अनुभवों से उत्तर ढूंढने का प्रयास करें।



1.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. आदिकालीन काव्य- डॉ. वासुदेव सिंह (सम्पा.), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
2. दोहा-कोश- महपंडित राहुल सांकृत्यायन, बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद, पटना।



1.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. सरहपा के 'दोहाकोश' का संपादन किसने किया?
2. सरहपा को किन-किन नामों से हम जानते हैं?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. सरहपाद को किन-किन नाम से जाने जाते हैं ? उनके दोहाकोश के बारे में आप क्या जानते हैं ?
2. सरहपाद का जीवन और साहित्य के बारे में लिखिए।
3. उल्लेखित पदों की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
4. सप्रसंग व्याख्या कीजिए-

'जहि मण पवण ण संचरइ, रवि-ससि णाहिं पवेस।।
तहि बढ चित्त विसाम करू, सरहें कहिअ उएस।।
एकक करू मा वेणणि करुखा मा करू विणणि विसेस।
एक्कें रंगे राञ्जआ, तिहुअण सअलासेस।।'

*** ***** ***

इकाई 2 : गोरख नाथ

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 गौरख नाथ का सामान्य परिचय

2.4 गौरख के पद

2.5 पद में निहित संवेदना

2.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

2.7 अधिक जानने के लिए पढ़े

2.8 अभ्यास प्रश्न

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप –

- गोरख नाथ के जीवन और साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- गोरख के पदों में निहित रस का आनंद ले पायेंगे।
- उनके पदों में निहित संवेदना से भी परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

2.2 प्रस्तावना

गोरख नाथ हिंदी साहित्य जगत के नवनाथों में से एक प्रसिद्द नाथ थे। कहा जाता है कि नाथ आन्दोलन को आगे ले जाने में गोरख नाथ का विशेष प्रभाव और महत्व रहा है। उनका सामान्य परिचय नीचे उपलब्ध है।

2.3 गोरख नाथ का सामान्य परिचय

गोरखनाथ को गोरक्षनाथ के नाम से भी जाना जाता हैं। गोरखनाथ 11वीं सदी के एक हिंदू योगी संत थे और भारत में नाथ हिंदू मठवासी आंदोलन के संस्थापक भी। इनके गुरु थे मत्स्येन्द्रनाथ। गोरखनाथ को मत्स्येन्द्रनाथ के दो प्रमुख शिष्यों में से एक माना जाता हैं। उनके अनुयायियों को योगी, गोरखनाथी, दर्शनी अथवा कनफटा आदि भी कहा गया है।

उल्लेखनीय है कि गोरखनाथ हिंदू परंपरा के महा-योगी थे। उन्होंने यद्यपि किसी विशिष्ट आध्यात्मिक-दार्शनिक सिद्धांत या किसी विशेष सत्य पर जोर नहीं दिया, मगर उनके वाणियों से ज्ञात होता है कि सत्य और आध्यात्मिकता की खोज मनुष्य जीवन का सामान्य लक्ष्य होना चाहिए। गोरखनाथ ने समाधि तक पहुंचने के साधन के रूप में योग, आध्यात्मिक अनुशासन

और आत्मनिर्णय के नैतिक जीवन का समर्थन किया है। उनके विचार से योग-दर्शन ग्रामीण भारत में अधिक लोकप्रिय सिद्ध हुए, उन्हें समर्पित मठ और मंदिर भारत के कई राज्यों में पाए जाते हैं, विशेष रूप से इसी नाम के शहर गोरखपुर में।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. कनफटा से तात्पर्य क्या है?

प्रश्न 2. गोरखनाथ किस सिद्धांत के अनुयायी थे?

रचनाएँ : डॉ. बड़थ्वाल की खोज तथा अनुसन्धान में गोरखनाथ के कुल 40 पुस्तकों के बारे में पता चला है। डॉ. बड़थ्वाल ने बहुत छानबीन के बाद इनमें से प्रथम 14 ग्रंथों को असंदिग्ध रूप से प्राचीन माना है, क्योंकि इनका उल्लेख प्राय: सभी प्रतियों में मिलता है। तेरहवीं पुस्तक 'ग्यान चौंतीसा' समय पर न मिल सकने के कारण उनके द्वारा संपादित संग्रह में नहीं आ पायी, परन्तु बाकी तेरह को गोरखनाथ की रचनाएँ समझकर उन्होंने उस संग्रह में सबको स्थान दिया। गौरख नाथ की रचनाएँ निम्नलिखित हैं-

सबदी, पद, शिष्यादर्शन, प्राण-संकलि, नरवै बोध, आत्मबोध, अभय मात्रा जोग, पंद्रह तिथि, सप्तवार, मंछिद्र गोरख बोध, रोमावली, ग्यान तिलक, ग्यान चौंतीसा, पंचमात्रा, गोरखगणेश गोष्ठी, गोरखदत्त गोष्ठी (ग्यान दीपबोध), महादेव गोरखगुष्टि, शिष्ट पुराण, दया बोध, जाति भौंरावली (छंद गोरख), नवग्रह, नवरात्र, अष्टपारछ्या, रह रास, ग्यान-माला, आत्मबोध 2, व्रत, निरंजन पुराण, गोरख वचन, इंद्री देवता, मूलगर्भावली, खाणीवाणी, गोरखसत, अष्टमुद्रा, चौबीस सिद्ध, षडक्षरी, पंच अग्नि, अष्टचक्र, अवलि सिलूक और काफिर बोध।

2.4 गोरख के पद (मूल पाठ)

(1)

अदेषि देषिबा देषि बिचारिबा अदिसिटी राषिबा चीया।
पाताल की गंगा ब्रह्मण्ड चढ़ाइबा, तहां बिमल जल पीया।

(2)

बेद कतेब न षांणीं। सब ढंकी यदि आंणीं।।
गगनि सिषर महि सबद प्रकास्या। तहं बूझै अलष बिनांणीं।

(3)

हसिबा षेलिबा रहिबा रंग। कांम क्रोध न करिबा संग।।
हसिबा षेलिबा गाइबा गीत। दिढ करि राषि आपनां चीत।।

(4)

हसिबा षेलिबा धरिबा ध्यांन। अहनिसि कथिबा ब्रह्म गियान।।
हसै षेलै न करै मन भंग। ते निहचल सदा नाथ कै संग।।

(5)

अह निसि मन लै रहे उनमन गम की छांड़ि अगम की कहै।
छांड़ै आसा रहै निरास, कहै ब्रह्मा हूं ताका दास।।

2.5 पद में निहित संवेदना

न देखे हुए (परमब्रह्म) को देखना चाहिए। देख कर उस पर विचार करना चाहिए। जिन्हें आंखों से देखा नहीं जाता उन्हें चित्त में रखना चाहिए। पाताल की गंगा (योगिनी शक्ति, कुंडलिनी) को ब्रह्मांड (ब्रह्मरंध्र, सहस्रार या सहस्रदल कमल) में प्रेरित करना चाहिए। जहाँ पहुँचकर योगी (योगी साक्षात्काररूपी) निर्मल रस अर्थात शांति का अनुभव करता है।

महत्वपूर्ण है कि परमब्रह्म का ठीक-ठीक निर्वचन न वेद कर पाए हैं, न धर्म की पुस्तकें और न चारों खानि की वाणी। ये सब तो उसे आच्छादन के नीचे ले आए हैं। उन्होंने तो सत्य को प्रकट करने के बदले उस पर आवरण डाल दिया है। यदि ब्रह्म के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान तुम्हें अभीष्ट है तो ब्रह्मरंध्र (गगन शिखर) में समाधि द्वारा जो शब्द प्रकाश में आया है, उसमें विज्ञान रूप अलक्ष्य परब्रह्म का ज्ञान हो गया है, अर्थात एक शब्द में अगर कहा जाय तो 'तुमने उस सत्य को प्राप्त कर लिया है'।

चित्त की स्थिरता पर उन्होंने उल्लेख किया है कि 'हमें हंसना, खेलना, मस्त रहना चाहिए किंतु कभी काम क्रोध को साथ नहीं रखना चाहिए। हमें हंसना, खेलना और गीत भी गाना चाहिए किंतु अपने चित्त को दृढ़ करके रखना चाहिए'।

हंसना खेलना और ध्यान करना, रात-दिन ब्रह्म ज्ञान का कथन करना आवश्यक हैं। जो संयम पूर्वक हंसते-खेलते हुए अपने मन को वश में कर लेता है, जो निश्चल होकर ब्रह्म का स्मरण करता है उन्हें ही परमात्मा की प्राप्त होती हैं।

गौरख कहता है, जो रात-दिन बहिर्मुख मन को उन्मनावस्था में लीन किए रहता है, गम्य जगत की बातें छोड़कर अगम्य आध्यात्मिक क्षेत्र की बातें करता है, सब आशाओं को छोड़ देता है, वह ब्रह्मा से भी बढ़कर है, तभी ब्रह्म उसका दासत्व स्वीकार कर लेता है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. कविता में उल्लेखित 'निर्मल रस' से क्या तात्पर्य है?

प्रश्न 4. गौरखनाथ के अनुसार अपने चित्त को दृढ़ करना क्यों आवश्यक है?

2.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : कनफटा गोरख संप्रदाय के योगियों का एक वर्ग है। दीक्षा के समय कान छिदवाकर उसमें मुद्रा या कुंडल धारण करने के कारण इन्हें कनफटा कहा गया है।

प्रश्न 2 का उत्तर : जानने के लिए 'गोरख नाथ का सामान्य परिचय' अध्ययन कीजिए।

प्रश्न 3 का उत्तर : इसे जानने के लिए पदों में निहित संवेदना को ध्यान से पढ़िए।

प्रश्न 4 का उत्तर : उल्लेखित कविता की संवेदना को पढ़ते हुए, समझकर लिखिए।



2.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. गोरख-बानी, डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल (संपा), हिंदी साहित्य-सम्मलेन, प्रयाग।



2.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. डॉ. बड़थ्वाल की खोज तथा अनुसन्धान में गोरखनाथ के कुल कितने पुस्तकों के बारे में पता चलता हैं ?
2. गोरखनाथ का दूसरा नाम क्या है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. गोरखनाथ का परिचय दीजिए।
2. उल्लेखित पदों में निहित संवेदनाओं को स्पष्ट कीजिए।
3. गोरख ने परमब्रह्म को लेकर क्या कहा है ? आलोचना कीजिए।
4. तात्पर्य स्पष्ट कीजिए-

   'बेद कतेब न षांणीं। सब ढंकी यदि आंणीं।'

*** ***** ***

इकाई 3 : विद्यापति के पद-1

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 विद्यापति का सामान्य अध्ययन
3.4 विद्यापति के पद (मूल पाठ)
3.5 पद का सारांश
3.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
3.7 अधिक जानने के लिए पढ़े
3.8 अभ्यास प्रश्न

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप –

- विद्यापति के जीवन और उनके साहित्य के बारे में जानेगें
- विद्यापति की काव्यभाषाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे
- उनके पदों का आनंद लेने के साथ-साथ उसमें निहित संवेदना का स्वरुप के बारे में जान सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना

हिंदी साहित्येतिहास के आदिकाल में देशभाषा काव्य के अंतर्गत विद्यापति का महत्व फुटकल रचनाओं के साहित्यकार के रूप में काफी प्रसिद्ध है। विद्यापति एक साथ मैथिली और संस्कृत के कवि, संगीतकार, लेखक, दरबारी और राज पुरोहित थे। उन्हें 'मैथिल कोकिल' के नाम से जाना जाता है। उन्होंने अपने पदों में शृंगार और भक्ति का सुन्दर समन्वय किया। नीचे उनके जीवन और साहित्य से संबंधित आलोचना प्रस्तुत हैं।

3.3 विद्यापति का सामान्य परिचय

विद्यापति का जन्म 1380 ई. में मधुबनी (बिहार) के बिसपी गाँव के एक ऐसे परिवार में हुआ, जो विद्या और ज्ञान के लिए प्रसिद्ध थे। उनके जन्मकाल के संबंध में प्रामाणिक सूचना उपलब्ध नहीं हैं। रचनाकाल और आश्रयदाता के राज्यकाल के अनुसंधान के आधार पर उनके जन्म और मृत्यु वर्ष का अनुमान किया गया है। विद्यापति मिथिला नरेश राजा शिवसिंह के

अभिन्न मित्र, राजकवि और सलाहकार थे।

विद्यापति बचपन से ही अत्यंत कुशाग्र बुद्धिसंपन्न और तर्कशील व्यक्तित्व के अधिकारी थे। वे एक साथ साहित्य, संस्कृति, संगीत, ज्योतिष, इतिहास, दर्शन, न्याय, भूगोल आदि के महान पंडित थे। उन्होंने संस्कृत, अवहट्ठ (अपभ्रंश) और मैथिली-तीनों भाषाओं में रचनाएँ की। इनके अतिरिक्त उन्हें कई समकालीन भाषा-उपभाषाओं का भी ज्ञान था। विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर प्रसाद के सभासद थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राज-दरबार में आया-जाया करते थे। विद्यापति के गुणों पर मुग्ध होकर राजा शिवसिंह ने बिसपी गाँव विद्यापति को दान-स्वरूप दे दिया था। जिसका उल्लेख एक ताम्रपत्र पर भी मिलता है।

विद्यापति के वंशज बहुत समय तक इसी गाँव में रहे थे। विद्यापति की पत्नी का नाम चंदलदेइ या चंपति देवी बताया जाता है। उनको मिथिला के राजा कीर्तिसिंह का आश्रय और संरक्षण प्राप्त हो गया था। उनके आश्रय में ही कवि ने कीर्तिसिंह की प्रशंसा में 'कीर्तिलता की रचना की थी। उस समय मिथिला में अशांति और अराजकता फैली हुई थी। अत: उन्होंने इस रचना में मूलत: वीर रस का ही प्रयोग कर अवहट्ठ (देशभाषा) में की है। यह एक प्रकार की लोकभाषा थी। बाद में कीर्तिसिंह के प्रेम-प्रसंगों को लेकर 'कीर्तिपताका' की भी इन्होंने रचना की। राजा देवसिंह की जीवित अवस्था में ही विद्यापति को शिवसिंह और उनकी पत्नी लखिमा देवी की ओर से पूर्ण सम्मान प्राप्त होने लगा था। लखिमा देवी के बारे में प्रवाद है कि वह बहुत अधिक सौन्दर्य शाली, विदुषी एवं कवयित्री थी।

विद्यापति दरबारी कवि अवश्य थे, किंतु उन्होंने अपने को चारण नहीं बनाया। वे राजा शिवसिंह के अंतरंग मित्र थे। वे अपने समवयस्क युवा राजा और युवती रानी लखिमा देवी के समक्ष जिन गीतों का सस्वर पाठ करते थे, उनमें प्राय: राधा-कृष्ण के प्रेम, रूपासक्ति, मान और काम-कला के विविध पक्ष स्पष्ट झलकता है।

शिवसिंह के निधन के बाद कवि विद्यापति की स्थिति अत्यंत शोचनीय हो गई थी। प्रणय, मांसल-सौंदर्य, काम-मुद्राएँ आदि सब रंगीन दुनिया चूर-चूर हो गई। मिलन के मादक गीतों के स्थान पर विरह के स्वर फूट पड़ने लगे। इस प्रकार विद्यापति ने अपने जीवन में पूर्ण सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त कर अंतिम अवस्था में इस नश्वर शरीर को 1460 ई. में गंगा को समर्पित कर दिया।

रचनाएँ : विद्यापति ने संस्कृत, अपभ्रंश और मैथिली में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की। संस्कृत में उनकी रचनाओं की संख्या 11 मानी जाती हैं। इनमें प्रमुख हैं-

भू-परिक्रमा (राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई),

पुरुष परीक्षा (राजा शिवसिंह की आज्ञा से),

लिखनावली (पत्र-व्यवहार की रीति का वर्णन),

शैवसर्वस्वसार (महाराजा पद्यसिंह की पत्नी विश्वास देवी की आज्ञा से),

वान वाक्यावली (राजा नरसिंह देव की पत्नी धीरमति देवी की आज्ञा से) आदि।

अवहट्ठ में उन्होंने 'कीर्तिलता' (महाराजा कीर्तिसिंह की कीर्ति का बखानकर) और 'कीर्तिपताका' लिखा। मैथिली में रचित 'पदावली' कवि के बाल्यावस्था से मृत्युपर्याय तक की कविताओं का संग्रह है।

विद्यापति को आदिकाल और भक्तिकाल के संधि-कवि कहे जा सकते हैं। उनकी कीर्तिलता और कीर्तिपताका जैसी रचनाओं पर दरबारी संस्कृति और अपभ्रंश काव्य-परंपरा का प्रभाव रहा है। उनकी पदावली के गीतों में भक्ति और प्रेम-सौंदर्य की गूँज विद्यमान हैं। विद्यापति की 'पदावली' ही उनकी यश का प्रमुख स्रोत है। वे हिंदी साहित्य के मध्यकाल के पहले ऐसे कवि हुए जिनकी पदावली में जन-भाषा में जन-संस्कृति अभिव्यक्ति हुई थी।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. विद्यापति ने किसके राज्याश्रय में रहकर अपनी काव्य की रचना करते थे?

प्रश्न 2. विद्यापति के गीतिकाव्य की प्रमुख विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न 3. राजा शिवसिंह की पत्नी का नाम क्या है?

भाषा-शैली : महाकवि विद्यापति को भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वे संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों के स्थान पर देशज शब्दों का प्रयोग करते थे। पदावली में उन्होंने कोमल-कांत शब्दों का प्रयोग किया है। विद्यापति शब्दों के कुशल कारिगर थे, नाद-सौन्दर्य के धनी। उन्हें ज्ञात था कि किस स्थान पर कौन सा शब्द प्रभावोत्पादक हो सकता है। कहावतों के प्रयोग में भी विद्यापति सिद्धहस्त थे। विद्यापति की पदावली में मैथिली भाषा का प्रयोग हुआ है, पर उनकी भाषा में अरबी-फारसी के शब्द भी आवश्यकता के अनुसार प्रयुक्त हुए हैं, जो बिलकुल ही सरल और स्वाभाविक है।

3.4 विद्यापति के पद (मूल पाठ)

के पतिआ लए जाएत रे मोरा पिअतम पास।
हिए नहि सहए असह दु:ख रे भेल साओन मास्।
एकसरि भवन पिआ बिनु रे मोहि रहलो न जाए।
सखि अनकर दु:ख वारुन रे जग के पतिआए।
मोर मन हरि हर लए गेल रे अपनो मन गेल।
गोकुल तेजि मधुपुर बस रे कन अपजस लेल॥
विद्यापति कवि गाओल रे धनि धरु मन आस।
आओत तोर मन भावन रे एहि कातिक मास॥

शब्दार्थ : पतिआ-पत्र, साओन-सावन, दारुन-कठोर, अपजस बदनामी, अनकर-अन्यतम, दूसरे का, वारुन-कठोर, के पतिआए-कौन विश्वास करेगा, हरि-कृष्ण, हरि लय गेल-हर कर ले गए, तेजि-त्यागकर, मधुपुर-मथुरा, अपजस-अपयश, आओत-आएगा, मनभावन-प्रियतम, एहि-इसी, कातिक-कार्तिक ।



3.5 पद का सारांश

प्रस्तुत पद में कवि विद्यापति ने नायिका की विरहावस्था का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। सावन मास चल रहा है। विरहिणी राधा अपनी सखी से कह रही है कि हे सखि! ऐसा कौन व्यक्ति है, जो प्रियतम को मेरा पत्र देकर आएगा। सावन का महीना है। मेरा हृदय वियोग के दु:ख को सहन नहीं कर पा रहा है, मैं व्यथित हूँ। प्रिय के बिना इस सूने घर में मुझसे एकाकी नहीं रहा जाता है। हे सखि ! ऐसा कौन है जो दूसरे के कठोर दु:ख पर विश्वास कर सके। श्रीकृष्ण मेरे मन को हरण कर अपने साथ ले गए हैं और उनका मन भी यहाँ से वहाँ चला गया है अर्थात् उनका ध्यान अब मेरी ओर नहीं रहा है। वे गोकुल को छोड़कर मथुरा में जा बसे हैं । इस प्रकार उन्होंने कितना ही अपयश ले लिया है। कवि विद्यापति कहते हैं- हे सुंदरी! प्रिय के आने की आशा रखो। इसी कार्तिक महीने में तुम्हारे प्रियतम तुम्हारे पास आ जाएँगे।



3.6 अधिक जानने के लिए पढ़े

विद्यापति पदावली (टिपण्णी-सहित), श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी, पुस्तक-भंडार, लहेरिया सराय और पटना



3.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : शिवसिंह।

प्रश्न 2 का उत्तर : गेयधर्मिता, अनुभूति की संक्षिप्तता, भाव की एकसूत्रता, प्रभावोत्पादक, संबद्धता आदि।

प्रश्न 3 का उत्तर : इस उत्तर को खोजने के लिए विद्यापति का सामान्य परिचय को ध्यान से पढ़िए।



3.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. आदिकाल में देशभाषा काव्य के अंतर्गत विद्यापति किस रचनाओं के साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध है ?
2. 'कीर्तिलता' किस भाषा में लिखा गया है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. विद्यापति का साहित्यिक परिचय दीजिए।
2. उल्लेखित विद्यापति के पदों का भावार्थ को प्रस्तुत कीजिए।
3. विद्यापति की भाषा-शैली पर उदहारण सहित टिप्पणी प्रस्तुत कीजिए।
4. सप्रसंग व्याख्या प्रस्तुत कीजिए -

   के पतिआ लए जाएत रे मोरा पिअतम पास।
   हिए नहि सहए असह दु:ख रे भेल साओन मास्।
   एकसरि भवन पिआ बिनु रे मोहि रहलो न जाए।
   सखि अनकर दु:ख वारुन रे जग के पतिआए।

*** ***** ***

इकाई 4 : विद्यापति के पद-2

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 विद्यापति भक्त या शृंगारिक कवि

4.3.1 विद्यापति को शृंगारिक कवि मानने के पीछे तर्क

4.3.2 विद्यापति को भक्त कवि मानने के पीछे तर्क

4.4 विद्यापति पद (मूल पाठ)

4.5 पद में निहित संवेदना

4.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

4.7 अधिक जानने के लिए पढ़े

4.8 अभ्यास प्रश्न

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- विद्यापति भक्त कवि है अथवा शृंगारिक कवि के बारे में ज्ञात प्राप्त कर पाएंगे।
- विद्यापति के पद में निहित रस और भाषाई-योजना को समझ सकेंगे।
- उनके पद में निहित संवेदना अथवा उल्लेखित पद का भावार्थ को जानेंगे।

4.2 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में विद्यापति उस सुललित, मधुर, सौंदर्यमयी काव्य-भाषा के जनक हैं; जिसका अनुसरण कर सूर आदि परवर्ती कवियों ने काव्य रस की अजस्र सुमधुर धारा प्रवाहित की हैं। विद्यापति ने जिन पदों की रचना की हैं वे मिथिला क्षेत्र के लोक-व्यवहार में और सांस्कृतिक अनुष्ठानों में इस तरह समा गए हैं कि पदों की पंक्तियाँ अब वहाँ के मुहावरे बन गई हैं। लोकानुरंजन, पद-लालित्य, मानवीय-प्रेम और व्यावहारिक जीवन के विविध रंग इन पदों को मनोरम और आकर्षक बनाते हैं। कवि ने राधा-कृष्ण के प्रेम के माध्यम से लौकिक प्रेम के विभिन्न रूपों का चित्रण, स्तुति-पदों में विभिन्न देवी-देवताओं की भक्ति, प्रकृति संबंधी पदों में प्रकृति की मनोहर छवि और रचनाकार के अपूर्व कौशल, प्रतिभा और कल्पनाशीलता ने उनके पदों को अधिक आकर्षक बना दिया है। उनके पदों में प्रेम और सौंदर्य की अनुभूति में जिस धारा का प्रवाह हुआ है वह अन्यत्र दुर्लभ है।

4.3 विद्यापति भक्त है अथवा शृंगारिक कवि ?

विद्यापति की प्रसिद्धि का मूल आधार उनकी रचना 'पदावली' है। पदावली में भक्ति विषयक पद भी हैं और शृंगारिक पद भी। उनके पदों को देखते हुए यह प्रश्न सबके मन में उत्पन्न होता है कि विद्यापति को क्या माना जाय; भक्त कवि या शृंगारिक कवि ?

जार्ज ग्रियर्सन, बाबू श्याम सुंदर दास, तथा बाबू ब्रजनंदन सहाय जैसे कुछ विद्वानों ने विद्यापति को भक्त कवि माना है। वहीं दूसरी ओर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बाबूराम सक्सेना, डॉ. राम कुमार वर्मा और बच्चन सिंह जैसे विद्वानों ने विद्यापति को शृंगारिक कवि कहा है।

विद्यापति की कूल रचनाएँ 18 मिलती हैं, जिनमें संस्कृत की 15 रचनाओं में से 'मणिमंजरी' को छोड़कर कोई भी शृंगारिक नहीं हैं। शेष रचनाओं में 'भूपरिक्रमा' में बलदेव द्वारा भूपरिक्रमा का वर्णन हुआ है तथा 'पुरुष-परीक्षा' नीति ग्रंथ है, 'शैव सर्वस्वसार' और 'शैव सर्वस्वसाराभूत' शिवभक्ति से संबंधित हैं। इस तरह, क़रीब 5 रचनाएँ भक्तिपरक हैं, बाक़ी नीति या कर्मकांड विषयक। अवहट्ट की दोनों रचनाएँ- 'कीर्तिलता' और 'कीर्तिपताका' वीररस परक हैं। जबकि पदावली में शृंगार और भक्ति दोनों प्रकार के पद का समावेश हुआ है। कृतियों के आधार पर ये भक्त अधिक ठहरते हैं, शृंगारिक कम।

दूसरी ओर विद्यापति आश्रित कवि थे। अत: आश्रयदाता को खुश करने के लिए कविता करना आवश्यक था। इनके द्वारा रचित सारे पद आश्रयदाता की इच्छा को ध्यान रखकर उनकी प्रशंसा में लिखा गया। इसका प्रमाण पद के अंतिम चरण में उनके नाम का उल्लेख से भी प्राप्त होता है । इस तरह, जब स्वामी ने शृंगारिक पद पसंद किया, तब शृंगारिक पद रचे गए। जब भक्ति के पद सुनने की रुचि ज़ाहिर की, तब भक्ति के सुनाए गए। संस्कृत के 'शैवसर्वस्वसार' तथा 'गंगावाक्यावली' महाराज पद्मसिंह की पत्नी की आज्ञा से ही रचे गए थे। दूसरी और विद्यापति के आश्रयदाता भी बदलते रहे थे। कभी किसी राजा के दरबार में रहे तो कभी किसी दूसरे राजा के। फलत: गृहस्थ होने के नाते आजीविका तथा यश दोनों की प्राप्ति के लिए युग, परिस्थिति, वातावरण आदि के अनुरूप रचनाएँ सृजन हुई।

विद्यापति ने नायिका राधा की वय: संधि का सांगोपांग, सुंदर, सजीव एवं स्वाभाविक चित्रण किया है। उनके सद्य:स्नाता, अभिसार, मान, सुरति विहार इत्यादि को देखते हुए डॉ. रामकुमार वर्मा ने कहा इस बाह्य संसार में ईश्वर पूजा कहाँ? सद्य:स्नाता में ईश्वर से नाता कहाँ? वय:संधि में ईश्वर संधि कहाँ? अभिसार में भक्ति का सार कहाँ? विद्यापति की कविता विलास की सामग्री हो सकती है, आराधना की साधना नहीं। इनके कृष्ण मतवाले हो सकते हैं, शांत नहीं।

इसी तरह, विद्यापति के भक्तिपरक पदों में शिव, दुर्गा, काली, भैरवी, कृष्ण

प्रभृति तथा पंचदेवता की पूजा के पद मिलते हैं। उन पदों में इनकी भक्ति के प्रचंड रूप देखने को मिलते हैं। इस तरह इनके यहाँ मिथिला में प्रचलित-पूजित सभी देव-देवताओं को प्रतिष्ठा मिली हैं। यही नहीं, इन्होंने भक्ति में शैव, वैष्णव आदि के झगड़े को मिटाकर समन्वय की चेष्टा की तथा सब को ईश्वर के अलग-अलग रूप में देखा है।

कविश्रेष्ठ विद्यापति के स्वयं का व्यक्तित्व उनके भक्त होने का प्रमाण है। वे शैवों की तरह त्रिपुंड लगाते एवं रुद्राक्ष धारण करते थे शाक्तों का प्रतीक त्रिपुंड के बीच लाल टीका लगाते थे। सिर पर पाग आदि के कारण आपादमस्तक भक्त कहलाने के अधिकारी हैं।

4.3.1 विद्यापति को शृंगारिक कवि मानने के पीछे तर्क

पदावली में अधिकतर पद संयोग शृंगार के है। विद्यापति शैव थे अत: यदि भक्ति करनी होती तो शिव-पार्वती की करते, न राधा कृष्ण की। विद्यापति ने अपने आश्रयदाता राजा शिव सिंह की प्रशंसा एवं मनोरंजन हेतु कृष्ण का प्रतीकात्मक प्रयोग किया है जो वास्तव में शिव सिंह ही है। विद्यापति के काव्य में विद्यमान भक्ति तत्व की सबसे तीखी आलोचना आचार्य रामचंद्र शुक्ल करते हुए कहते हैं कि ''आध्यात्मिक रंग के चश्में आजकल बहुत सस्ते हो गए हैं। उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने 'गीत-गोविंद' को आध्यात्मिक संकेत बताया है वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी।''

शृंगार विषयक इन्हीं तर्कों के आधार पर विद्यापति के काव्य को निराला 'नागिन की लहर' कहते हैं, तो बच्चन सिंह 'खजुराहों की मंदिरों वाली आध्यात्मिकता'।

4.3.2 विद्यापति को भक्त कवि मानने के पीछे तर्क

विद्यापति के पद शृंगारिक या अश्लील होते तो मंदिरों में क्यों गाए जाते? इसे सुनकर चैतन्य महाप्रभु जैसे भक्त मूर्छित क्यों हुआ करते? परवर्ती काल में कृष्णदास, गोविंददास जैसे कवियों ने विद्यापति को भक्त कवि के रूप में ही महत्त दिया है । यदि राधा-कृष्ण के शृंगार का विस्तृत वर्णन कर सूरदास भक्त कवि हो सकते हैं तो विद्यापति क्यों नहीं? विद्यापति ने शिव स्तुति, गंगा स्तुति, काली वंदना, कृष्ण प्रार्थना जैसे भक्तिपरक पदों की भी रचना की है। विद्यापति को भक्त मानते हुए जार्ज ग्रियर्सन ने लिखा है ''राधा जीवात्मा का प्रतीक है और कृष्ण परमात्मा का। जीवात्मा, परमात्मा से मिलने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है।''

उपर्युक्त विश्लेषण के आलोक में यह माना जा सकता है कि विद्यापति में शृंगार समन्वित भक्ति हैं। इनके यहाँ लौकिक प्रेम ही ईश्वरोन्मुख होकर कहीं-कहीं भक्ति में परिणत हो गया है। इनकी भक्ति भावना पर अपनी पूर्ववर्ती परंपरा का प्रभाव है साथ ही, प्रेम तत्व का संमिश्रण भी। इनके विनयाभक्ति के पदों में जहाँ एक सच्चे विनीत भक्त का रूप दिखाई देता है, वहाँ शृंगारिक पदों में ये रसिक-शिरोमणि कृष्ण के साथ शत-प्रतिशत शृंगारी रसिक कवि होने का प्रमाण दिलाता है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. विद्यापति के काव्य को खजुराहों की मंदिरों वाली आध्यात्मिकता बताने वाले विद्वान कौन थे?

प्रश्न 2. 'राधा जावात्मा का प्रतीक है और कृष्ण परमात्मा का। जीवात्मा, परमात्मा से मिलने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है।'- किसने कहाँ?

प्रश्न 3. क्या विद्यापति को हम भक्त कवि मान सकते हैं?

4.4 विद्यापति के पद (मूल पाठ)

सखि हे, कि पुछसि अनुभव मोए।
सेह पिरिति अनुराग बखानिअ तिल तिल नूतन होए।।
जनम अबधि हम रूप निहारल नयन न तिरपित भेल।।
सेहो मधुर बोल स्रवनहि सूनल स्रुति पथ परस न गेल।।
कत मधु-जामिनि रभस गमाओलि न बूझल कइसन केलि।।
लाख लाख जुग हिअ हिअ राखल तइओ हिअ जरनि न गेल।।
कत बिदगध जन रस अनुमोदए अनुभव काहु न पेख।।
विद्यापति कह प्रान जुड़ाइते लाखे न मीलल एक।।
कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि,
मूदि रहए दु नयान।
कोकिल-कलरव, मधुकर-धुनि सुनि,
कर देइ झाँपइ कान।।
माधब, सुन-सुन बचन हमारा।
तुअ गुन सुंदरि अति भेल दूबरि-
गुनि-गुनि प्रेम तोहारा।।

धरनी धरि धनि कत बेरि बइसइ,
पुनि तहि उठइ न पारा।
कातर दिठि करि, चौदिस हेरि हेरि
नयन गरए जल-धारा।।
तोहर बिरह दिन छन-छन तनु छिन-
चौदसि-चाँद-समान।
भनइ विद्यापति सिबसिंह नर-पति
लखिमादेइ-रमान।।

शब्दार्थ : बखानिउ-कहकर, स्रवनहि-कानों से, मधु जामिनी-वसंत की सुहावनी रातें, रभस-कामक्रीड़ा, गमाओलि-गँवाई, झाँपइ-बंद कर दे, चौदसीङ्कचौदहवाँ।

4.5 पद में निहित संवेदना

सखियाँ नायिका राधा से उसकी प्रेमानुभूति को जानने की इच्छा करती हैं। उसने कृष्ण से जो प्रेम किया है, वह कैसा है? नायिका उनकी जिज्ञासा को शांत करती हुई उस प्रेम का वर्णन करती है। तुझे उस प्रेमानुभव के बारे में क्या बताऊँ? इसके आनंद और स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता । यदि उस प्रेम तथा अनुराग का वर्णन किया जाए तो वह क्षण-प्रतिक्षण नवीन-ही-नवीन दिखाई पड़ता है। अत: उसका वर्णन करना कोई सरल काम नहीं है। वर्णन तो स्थिर वस्तु का किया जा सकता है। मैं तो जीवन-भर कृष्ण के रूप को टकटकी बाँध कर देखती रहती हूँ, तभी तो मेरे नेत्र अभी तक तृप्त नहीं हुए हैं। मैं उनके मधुर वचन को सदैव कानों से सुनती रही हूँ किंतु फिर भी लगता है कि जैसे मैंने उन्हें कभी सुना ही न हो। रूप और वाणी की चिर नवीनता मुझे अतृप्त बनाए रखती है।

मैंने कितनी ही मादक एवं सुहावनी वसंत की रातें कृष्ण के साथ प्रेम-क्रीड़ा करते हुए बितायी, फिर भी यह नहीं जान पाई कि रति-क्रीड़ा कैसी होती है? मिलन की उत्कंठा आज भी मन में बनी बैठी हुई है। मैंने युग-युगों तक अर्थात् चिरकाल तक अपने हृदय को उनके हृदय से लगाए रखा फिर भी मेरा हृदय शीतल नहीं हुआ अर्थात् मिलन की प्यास वैसी की वैसी बनी रही जैसे पहले थी। मैं क्या, कितने ही रसिकजन प्रेमरस का पान करते हैं, पर उस प्रेम का वास्तविक अनुभव क्या कोई जानता है? कवि विद्यापति कहते हैं कि उन्हें लाखों व्यक्तियों में भी एक व्यक्ति ऐसा नहीं मिला जिसके मन ने प्रेम में पूर्णतय: तृप्ति का अनुभव किया हो। कारण यह है कि प्रेम की पूर्ण तृप्ति हो ही नहीं सकती। प्रेम सदा नूतन बना रहता है, इसलिए उसका सही-सही वर्णन करना संभव नहीं है।

फिर, राधा की सहेली कृष्ण के सामने राधा की विरह अवस्था का वर्णन करती हुई कहती है! कमल के जैसी मुख वाली सुंदर राधा जब खिले हुए फूलों को देखती है तो वह अपनी आंखें बंद कर लेती है और कोयल की आवाज को सुनकर तथा भंवरे की गूंज को सुनकर राधा अपनी कान ढक लेती है। अर्थात ये सब जो मिलन के प्रतीक हैं इन सब को देखकर राधा का दु:ख और बढ़ जाता है। हे श्रीकृष्ण, तुम हमारी बात सुनो, तुम्हारे प्रेम में तुम्हें यादकर करके राधा की हालत बहुत खराब हो चुकी है और बहुत कमजोर हो गई है। राधा इतनी कमजोर हो गई है कि यदि वह एक बार धरती पर बैठ जाती है तो उससे उठा भी नहीं जाता। वह अपने दु:ख से चारों ओर देखती है, कि शायद तुम कहीं से आ जाओ लेकिन जब वह तुम्हें कहीं नहीं पाता तो निराश होकर रोने लगती है। तुमसे दूर होकर वह हर पल इतनी कमजोर होती जा रही है जैसा की चौदहवी का चांद होता है।

राजा शिवसिंह विरह के प्रभाव को जानते हैं और वह अपनी पत्नी लक्ष्मीदेवी को विरह का कष्ट नहीं देना चाहते तो इसीलिए वे अपनी पत्नी के साथ भ्रमण करते हैं।

4.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : के लिए विद्यापति को श्रृंगारिक मानने के तर्क उपशीर्षक के कथ्य को ध्यान से पढ़े।

प्रश्न 2 का उत्तर : जार्ज ग्रियर्सन ने कहा था।

प्रश्न 3 का उत्तर : को पाने के लिए इकाई को गंभीरतापूर्वक पढ़े।

4.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. विद्यापति पदावली (टिपण्णी-सहित), श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी, पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय और पटना।

4.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. 'पुरुष-परीक्षा' किस तरह का ग्रंथ है?
2. राजा शिवसिंह अपनी पत्नी के साथ क्यों भ्रमण करते है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए -

1. स्पष्ट कीजिए विद्यापति भक्त कवि है या फिर श्रृंगारिक कवि ?
2. उल्लेखित विद्यापति के पदों की भावार्थ को स्पष्ट कीजिए।
3. विद्यापति के श्रृंगार भावना पर प्रकाश डालिए।
4. सप्रसंग व्याख्या कीजिए -

   तोहर बिरह दिन छन-छन तनु छिन-
   चौदसि-चाँद-समान ।
   भनइ विद्यापति सिबसिंह नर-पति
   लखिमादेइ-रमान।।

*** ***** ***

इकाई 5 : कबीर दास (पद)-1

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 कबीर दास सामान्य परिचय

5.3.1 कबीर दास का साहित्यिक परिचय

5.3.2 भाषा-शैली

5.4 कबीर के पद (मूल पाठ)

5.5 पद का सारांश

5.6 प्रस्तुत अध्याय से हमनें क्या सीखा

5.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

5.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

5.6 अभ्यास प्रश्न

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- कबीर दास के जीवन और उनके साहित्य के बारे में जान पाएंगे
- कबीर के पद का आनंद ले पाएंगे
- उनके पद में निहित काव्य-संवेदनाओं से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना

भक्तिकालीन भक्ति धारा की निर्गुण शाखा के अंतर्गत ज्ञानमार्ग का प्रतिपादन करने वाले कबीर दास एक महान संत थे। हिंदी साहित्य जगत में उनका नाम बड़े ही आदर और श्रद्धा के साथ लिया जाता है। सहज, सरल तथा सधुक्कड़ी भाषा में लिखनेवाले उनके पद लोगों के दिल को छु कर दिमाग में घर कर लेनेवाला है। समाज में प्रचलित तत्कालीन अंधविश्वास, छुआछुत, हिंसा, कुरीतियाँ आदि के खिलाफ आवाज उठानेवाले कबीर दास एक सच्चे समाज सुधारक तथा मानवतावादी कवि थे। उनके पद हिंदी साहित्य में विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

5.3 कबीर दास का सामान्य परिचय

कबीर दास का जन्म कब हुआ इस संबंध में कोई निश्चित मत नहीं है। प्रामाणिक साक्ष्य उपलब्ध न होने के कारण इनके जन्म के संबंध में अनेक जनश्रुतियाँ एवं किंवदंतियाँ प्रचलित हैं।

'कबीर पन्थ' में कबीर का आविर्भाव काल सं. 1455 वि. (सन् 1398 ई.) में ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष पूर्णिमा सोमवार के दिन को स्वीकारा गया है। उनके जन्म के संबंध में निम्न काव्य पंक्तियां प्रसिद्ध हैं -

'चौदह सौ पचपन साल गये, चन्द्रवार एक ठाट ठये।
जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी प्रगट भये।।'

'भक्त परम्परा' में प्रसिद्ध है कि किसी विधवा ब्राह्मणी को स्वामी रामानन्द के आशीर्वाद से पुत्र उत्पन्न होने पर उसने समाज के भय से काशी के समीपस्थ लहरतारा, लहर तालाब के किनारे फेंक दिया था, जहाँ से नीमा और नीरू नाम के जुलाहा दम्पति ने उन्हें उठा ले गए और उनका नाम कबीर रखा। इस प्रकार कबीर दास जी पर बचपन से ही हिंदू और मुस्लिम दोनों धर्मों के संस्कार पड़े थे।

कबीर दास जी के जन्मस्थान के संबंध में तीन प्रकार के मत प्रचलित हैं- काशी, मगहर और आजमगढ़ जिले के बेलहरा गाँव। लेकिन सर्वाधिक स्वीकार करनेवाले मत काशी ही है। 'भक्त-परम्परा' एवं 'कबीर पन्थ' के अनुसार स्वामी रामानंद जी इनके गुरु थे। जिसकी पुष्टि स्वयं कबीर दास जी की यह पंक्तियां भी करती हैं-

'काशी में परगट भये, हैं रामानंद चेताये।'

इस कथन से इनके जन्म स्थान काशी का भी पता चलता है और इनके गुरु का नाम भी पता चलता है कि प्रसिद्ध वैष्णव संत आचार्य रामानंद जी से इन्होंने दीक्षा लिए थे। गुरुमंत्र के रूप में इन्हें 'राम' नाम मिला जो इनके जीवन की भावी साधना का मूल आधार है।

कबीर दास जी का विवाह 'लोई' नाम की एक स्त्री से हुआ था जिससे इनके दो बच्चे भी हुए, जिनका नाम कमाल और कमाली रखा गया था। कबीर को शिक्षा-प्राप्ति का अवसर नहीं प्राप्त हुआ। उनकी काव्य प्रतिभा उनके गुरु स्वामी रामानन्द जी की कृपा से ही जागृत हुई। अत: यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि इन्होंने स्वयं अपनी रचनाओं को लिपिबद्ध नहीं किया। अपने मन की अनुभूतियों को इन्होंने स्वाभाविक रूप से अपनी साखी के माध्यम से शिष्यों या संतों के सामने व्यक्त किया और उनके शिष्य ही उनके वाणियों को संग्रह करते गए।

कबीर दास ने अपनी वाणियों में हिन्दू-मुस्लिम दोनों के धर्माडंबरों का खुलकर विरोध किया। इन्होंने मंदिर, तीर्थांकर, माला, नमाज, पूजा-पाठ आदि धर्म के बाहरी आचार-व्यवहार तथा कर्मकांडों का कठोर शब्दों में निंदा किया और सत्य, प्रेम, सात्विकता, पवित्रता, सत्संग, इन्द्रिय निग्रह, सदाचार, गुरु महिमा, ईश्वर भक्ति आदि पर इन्होंने विशेष बल दिया।



महत्वपर्ण बिंदु

- हिंदी में उलटबाँसी रचनाओं का संबंध कबीरदास से हैं और जिसके लिए वे प्रसिद्ध भी है। किसी बात को सीधे न कहकर घुमा-फिराकर उलटकर कविता के माध्यम से कही जानेवाली बातें

अथवा व्यंजना को ही उलटबाँसी कहते हैं। कबीर के उलटबाँसी को समझना इतना आसान नहीं हैं, पाठक को प्रचलित अर्थ में ही उलझा रखता हैं, जबकि कबीर के कहने का तात्पर्य ठीक उसके उल्टा यानि की विपरीत होता है।

कहा जाता है कि कबीर दास अपने जीवन के अंतिम दिनों में मगहर चले गए थे। क्योंकि उस समय यह प्रथा चलती थी कि काशी में मरने पर व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा मगहर में मरने से व्यक्ति को नरक की प्राप्ति। समाज में प्रचलित इस अंधविश्वास को दूर करने के लिए कबीर दास ने अपने जीवन के अन्तिम समय में मगहर चले गए थे और वही वे परलोक सिधारे। उनकी मृत्यु तिथि को लेकर भी विद्वानों में अनेक मत प्रचलित हैं। 'कबीर पन्थ' में कबीर जी का मृत्युकाल सं. 1575 वि. माघ शुक्ल पक्ष एकादशी, बुधवार (सन् 1518 ई.) को स्वीकारा गया है। 'कबीर परचाई' के अनुसार बीस वर्ष में कबीर चेतन हुए और सौ वर्ष तक भक्ति करने के बाद मुक्ति पाई अर्थात् इन्होंने 120 वर्ष की आयु पाई थी। कबीर की मृत्यु के संबंध में निम्नलिखित पंक्तियां प्रसिद्ध हैं -

'संवत् पन्द्रह सौ पछत्तरा, कियो मगहर को गौन
माघे सुदी एकादशी, रलौ पौन में पौन।।'

5.3.1 कबीर दास का साहित्यिक परिचय

कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे फिर भी वे बहुश्रुत होने के साथ-साथ उच्च कोटि के प्रतिभा संपन्न धनी व्यक्ति थे। इस संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने लिखा है कि 'कविता करना कबीर का लक्ष्य नहीं था, कविता तो उन्हें भेंट में मिली हुई वस्तु थी उनका लक्ष्य लोकहित था।' कबीर दास अपने युग के सबसे महान् समाज सुधारक, प्रतिभा-संपन्न एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे। ये अनेक प्रकार के विरोधी संस्कारों में पले थे और उन्होंने किसी भी प्रकार के बाह्य आडम्बर, कर्मकांड और पूजा पाठ की अपेक्षा पवित्रता नैतिकता और सादे जीवन को अधिक महत्व देनेवाले थे । सत्य, अहिंसा, दया तथा संयमयुक्त धर्म के सामान्य स्वरूप में ही ये विश्वास करते थे जो भी संप्रदाय इन मूल्यों के विरुद्ध कहता था, उसका ये निर्ममता से खंडन करते थे। इसी कारण इन्होंने अपनी वाणियों में हिंदू और मुसलमान दोनों के रूढ़िगत विश्वासों एवं धार्मिक कुरीतियों का खुलकर विरोध किया है।

कबीर ने कभी अपनी अनुभूतियों को एक कवि की भांति लिखने-लिखवाने का प्रयत्न नहीं किया। शिष्य अथवा गाने वाले के मुख में पड़कर, इसका प्रसार होते-होते इनके पदों का स्वरूप भी एक जैसा नहीं रह गया। अपने अनपढ़ता को लेकर कबीर ने स्वयं लिखा-

'मसि कागद छुऔ नहीं, कलम गह्यों नहिं हाथ।'

इससे स्पष्ट है कि इन्होंने भक्ति के आवेश में जिन पदों एवं साखियों को गाया, उन्हें इनके शिष्यों ने संग्रहित कर लिया। उसी संग्रह का नाम 'बीजक' हैं। यह संग्रह तीन भागों में विभाजित हैं-साखी, सबद और रमैनी।

अधिकांश 'साखियाँ' दोहों में लिखी गई हैं पर उनमें सोरठे का प्रयोग भी मिलता है। 'सबद' गेय पद है और इनमें संगीतात्मकता विद्यमान है। चौपाई एवं दोहा छंद में रचित 'रमैनी' में कबीर के रहस्यवादी और दार्शनिक विचार प्रकट हुए हैं।

5.3.2 भाषा-शैली

कबीर दास की भाषा को मूलत: 'पंचमेल खिचड़ी' अथवा 'सधुक्कड़ी' भाषा कही जाती है, जिसमें अवधि, राजस्थानी, पंजाबी आदि अनेक प्रांतीय भाषाओं के शब्दों का मिश्रण हैं । सहज भावाभिव्यक्ति के लिए ऐसी ही लोकभाषा की आवश्यकता भी थी, इसीलिए इन्होंने साहित्य की अलंकृत भाषा को छोड़कर लोकभाषा को अपनाया। इनकी साखियों की भाषा अत्यंत सहज, सरल और प्रसाद गुणों से युक्त हैं।

कबीर दास जी की शैली उपदेशात्मक हैं। कुछ अद्भुत अनुभूतियों को कबीर ने विरोधाभास के माध्यम से उलटवासियों की चमत्कारपूर्ण शैली में व्यक्त किया है जिससे कहीं-कहीं दुर्बोधता आ गई है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. 'साखी' का आशय क्या है?

प्रश्न 2. उलटबाँसी से आप क्या समझते हैं?

5.4 कबीर के पद (मूल पाठ)

हम तौ एक एक करि जांनां।
दोइ कहैं तिनहीं कौं दोजग जिन नाहिंन पहिचांनां।।
एकै पवन एक ही पानीं एकै ज्योति समांनां।
एकै खाक गढ़े सब भांडै एकै कोहरा सांनां।।
जैसे बाढी काष्ट ही काटै अगिनि न काटै कोई।
सब घटि अंतरि तूँही व्यापक धरै सरूपै सोई।।
माया देखि के जगत लुभांनां काहे रे नर गरबांनां।
निरभै भया कछू नहिं ब्यापै कहै कबीर दिवांनां।।

शब्दार्थ : सांनां-एक साथ मिलकर, घटि-घड़ा

5.5 पद का सारांश

उल्लेखित पद में कबीर दास कहते हैं कि हमनें तो एक ही ईश्वर को जाना है। जिसने इस सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की है। लेकिन, परमात्मा के इस सत्य को जो नहीं जान पाए हैं वही इनके दो रूप को स्वीकार करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है, कि आत्मा व परमात्मा एक ही है और पूरे संसार में एक ही ईश्वर की सत्ता बिखरी हुई है। जो लोग ईश्वर को अलग-अलग मानते हैं, वह नरक के अधिकारी है। कबीर दास ने कहा है कि जिस तरह हवा एक है, पानी एक है, ठीक उसी प्रकार ईश्वर भी एक है। इस संसार के हर इंसान के भीतर उसी ईश्वर का अंश ज्योति रूप में समाया हुआ है। कबीर कहते हैं कि जैसे कुम्हार एक ही मिट्टी से अनेक प्रकार के बर्तन बनाते हैं। ठीक उसी प्रकार ईश्वर रुपी कुम्हार ने भी एक ही मिट्टी से अनेक प्रकार के मनुष्य को बनाये हैं। मनुष्यों का शरीर पंचतत्व (जल, वायु, अग्नि, आकाश और पृथ्वी) से बना हुआ है। कबीर दास ने यह भी कहा है कि लकड़ी के भीतर आग हर वक्त मौजूद रहती है जो सिर्फ लकड़ी के जलने पर ही दिखाई देती है। जिस प्रकार बढ़ई लकड़ी को तो काट सकता है लेकिन उसके भीतर की आग को नहीं काट सकता। ठीक उसी प्रकार मनुष्य का शरीर तो खत्म हो जाता है, मगर उसके भीतर की आत्मा कभी खत्म नहीं होती, वह अमर है क्योंकि वह परमात्मा का अंश है। अर्थात परमात्मा सभी जीवों के अंदर आत्मा के रूप में निवास करते हैं। कहने का तात्पर्य है कि सभी प्राणियों के ह्रदय के भीतर ईश्वर अनेक रूपों को धारण करते हुए समाए रहते हैं। इसी कारण कबीर उस परम सत्य ईश्वर की भक्ति में तन्मय हो गए हैं। वे संसार के माया-मोह से बहुत दूर चले गए हैं। इसीलिए कबीर दास कहते हैं कि 'हे! मनुष्य तू इस संसार के झूठे मोह-माया, भौतिक सुख सुविधाओं के प्रति आकर्षित होकर व्यर्थ में अभिमान कर रहा हैं। क्योंकि ये सब तो नश्वर हैं।' असल में कबीर ने सच को जान लिया है। उनके अनुसार संसार के सभी मोह-माया के बंधनों से मुक्त होकर, निडर रूप से प्रभु की भक्ति में लीन होने पर ही लोगों को ईश्वर की उपलब्धि हो जाती है। ईश्वर को जानना, समझना आदि का अर्थ है ईश्वर के प्रकृत स्वरूप को जान लेना। जिस तरह कबीर जान चुके थे कि आत्मा-परमात्मा एक ही हैं और सभी जीव उस परमात्मा से जुड़े हुए हैं। मनुष्य को भी संसारिक माया-मोहों से दूर रहकर तथा और निर्भय होकर एक दीवाने की तरह प्रभु-भक्ति में लीन होना आवश्यक है, तभी वे भवसागर रूपी संसार आसानी से पार कर सकेगा।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. कबीर के अनुसार नरक के अधिकारी कौन होते हैं?

प्रश्न 4. ईश्वर एक है -इसे प्रमाणित करने के लिए कबीर दास ने कैसा उपाय हमारे सामने रखा है?



5.6 प्रस्तुत अध्याय से हमनें क्या सीखा

इस अध्याय को पढ़ने के बाद हमें ज्ञात हुए कि कबीर दास के पद समाज के, जनगण के हित के लिए है। तत्कालीन समाज में व्याप्त बहुईश्वरवादी धारणाओं को पीछे छोड़ता हुआ कबीर ने एकेश्वर की प्रधानता पर अधिक बल दिया है। जिसके लिए उन्होंने कई उदहारण हमारे सामने प्रस्तुत किया हैं। लोगों को निडर होकर जीने के लिए एकांत भक्ति और मोह-माया को त्यागना आवश्यक है और इसी से ही मोक्ष की भी प्राप्त होती है।



5.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : साखी का मतलब है आँखों से प्रत्यक्ष देखनेवाला अर्थात साक्षी यानि की प्रमाण। साखी संस्कृत शब्द 'साक्षी' का तद्भव रूप है।

प्रश्न 2 का उत्तर : का उत्तर जानने के लिए 'महत्वपूर्ण बिंदु' शीर्षक से जो बॉक्स बनाया गया है, उसके कथ्य को ध्यान से पढ़िए।

प्रश्न 3 का उत्तर : जानने के लिए उल्लेखित पद का सारांश अध्ययन कीजिए।

प्रश्न 4 का उत्तर : जिस प्रकार इस संसार में एक ही हवा है, एक ही प्रकार का पानी है, वैसे ही ईश्वर भी एक ही है।

विस्तृत रूप से जानने के लिए इकाई को ध्यान से पढ़िए।



5.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. कबीर, (संपा.) हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।



5.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए -

1. कबीर के ईश्वर कैसा है ?
2. कबीर दास की काव्यभाषा क्या है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. कबीर के जीवन और साहित्य पर एक लेख प्रस्तुत कीजिए ?
2. कबीर दास की काव्यभाषा क्या है और उन्होंने ईश्वर के किस रूप को स्वीकारा है ? सतर्क उत्तर दीजिए।
3. उल्लेखित पदों में निहित संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
4. हम तौ एक एक करि जांनां
   दोइ कहैं तिनहीं कौं दोजग जिन नाहिंन पहिचांनां।।
   - प्रस्तुत पंक्ति से कबीर का आशय क्या है ?

*** ***** ***

इकाई 6 : कबीर दास (दोहे)-2

इकाई की रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 कबीर के समाज सुधार

6.4 कबीर के पद (मूल पाठ)

6.5 पद का सारांश

6.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

6.7 अधिक जानने के लिए पढ़े

6.7 अभ्यास प्रश्न

6.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- कबीर दास के समाज-सुधार की भावना से परिचय प्राप्त करेंगे
- कबीर के पद का आनंद ले सकेंगे
- उनके पद में निहित काव्य-संवेदना से रुवरुह हो पाएंगे।

6. 2 प्रस्तावना

संत कबीर दास हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ एवं प्रतिभासंपन्न कवि होने के साथ-साथ एक उच्चकोटि के महान चिंतक तथा संत थे। कबीर दास केवल राम जपने वाले जड़ साधक नहीं अपितु व्यावहारिक एवं सजग साधक थे। जिन्होंने समाज के हर दिशाओं पर ध्यान दिया।

कबीर दास निर्गुण, सर्वव्यापक, अविनाशी, निराकार परब्रह्म के उपासक थे। इसलिए वे कहते थे कि ईश्वर एक ही है और उसी ईश्वर की परम सत्ता पूरी सृष्टि में विखरे हुए हैं। कबीर ने उस परमब्रह्म परमात्मा को सृष्टि के कण-कण में देखा है, जिसकी व्याप्ति चारों ओर फैला हुआ है। कबीर दास जी आत्मा को परमात्मा का ही अंश मानते हैं। लोग केवल माया के कारण इसे अलग-अलग देखते हैं। असल में कबीर दास ईश्वर प्राप्ति के लिए बाह्य आडंबरों को निरर्थक मानते थे। वे कहते हैं कि ईश्वर हमारे अंदर ही समाये हुए हैं। जिन्हे बहुत सरलता से हमें प्राप्त होते है। बस जरूरत है अपने अंदर झाँक कर देखने की, ईश्वर के उस परम शक्ति को जानने की। कबीर प्रभु भक्ति में लीन हो गए थे। उनके प्रेम में डूब गए थे और वो इस सांसारिक मोह को छोड़ चुके थे। इसीलिए कबीर दास कहते हैं कि हे! मनुष्य तू इस संसार के झूठे मोह-माया, भौतिक सुख सुविधाओं के प्रति आकर्षित होकर व्यर्थ ही अभिमानी हो रहा है।

कबीर के पदों में निहित इस तरह की अबधारणाएँ केवल धर्म से ही संबंधित न होकर समाज के सभी वर्गों पर केन्द्रित था। उन्होंने अपने युक्ति से, अनुभव रुपी प्रमाणों से समाज में व्याप्त सभी झूठी धारणाओं की पोल खुली है।

6.3 कबीर के समाज सुधार

संत कबीर दास को भारतीय समाज तथा हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। तत्कालीन समाज विभिन्न समस्याओं से जब अवरुद्ध हो गए थे। धर्म, समाज, राजनीति सभी क्षेत्र में जब व्यभिचार फ़ैल गया था। जब रूढ़ियाँ, व्यभिचार, अंधविश्वास, ऊँच-नीच, वर्ण व्यवस्था, हिंदू-मुस्लिम की झगड़े, अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुके थे। तब कबीर दास ने उन सभी विषयों पर, लोगों का ध्यान आकर्षित किया और उसे सुलझाने की भरपुर कौशिश भी की। कबीर दास के समय में सामाजिक टूटन का मुख्य कारण धर्म ही था। इसलिए कबीर दास ने धर्म की सभी बाह्यिक आडंबरों पर खुलकर चर्चा एवं उसका घोर विरोध किया है। कहना उपयुक्त होगा कि कबीर केवल भक्त नहीं थे, वे मूल रूप से एक समाज सुधारक थे। एक नवीन शृंखलित समाज के पक्षधर थे, जहाँ सब समान और शांति से अपना जीवन निर्वाह कर सके। उनके साधनामार्ग में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का अलगाव नहीं है; सभी एक समान है, केवल मनुष्य है।

इस साधनामार्ग में ब्राह्मणों का वर्चस्व नहीं है क्योंकि, भक्तों का गुरु कोई ब्राह्मण नहीं साधारण संत अथवा साधू है। ब्राह्मणों के महत्व को अस्वीकार करना, सभी वर्गों के लिए एक नया आध्यात्मिक मार्ग की खोज करना; समाज में सबको सामान सुविधा तथा सम्मान देना, एक तरफ से सच्चे मानवतावाद की प्रतिष्ठा करना आदि ही कबीर के वाणियों की प्रमुख विशेषता हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि एक तरह से ब्राह्मणों की उपेक्षा कर कबीर दास ने युगों-युगों से निर्मित सामाजिक व्यवस्था पर गहरा छोट किया है। जात-पात, छुआछुत, ऊँच-नीच के भेद भावों को मिटाने के लिए कबीर दास ने अध्यात्मिक तथा दार्शनिक मान्यताओं का आधार ग्रहण किया है। उनके अनुसार -

'जाति न पूछो साधू से, पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का पड़ा रहने दो म्यान।।'

वे धर्म के बाह्यिक आडंबरों पर प्रहार करते हुए कहते हैं -

'माला फेरत जुग भया, फेरा न मन का फेर,
करका मनका दारिक दे, मन का मनका फेर।'

इसी तरह मुसलमानों को भी फरकारते हुए कहते हैं कि यदि अल्लाह को खुश करने के लिए रोजा रखना तो ठीक है, मगर जीवों को हलाल करना कतई सही नहीं हैं। कबीर कहते है-

'दिन में रोजा रहत हैं, रात को हनन हैं गाय।
ये खून वो बंदगी, कैसे खुशी खुदाय।।'

हम देखते हैं कि धर्म के संबंध में भावात्मकता का सवाल अब भी लोगों के बीच बना हुआ है। विगत आठ सौ वर्षों से एक साथ रहते हुए भी हिंदू-मुसलमानों के बीच तनाव की समस्या बनी हुई हैं। फलत: देश में किसी न किसी प्रकार के सांप्रदायिक दंगे-फसाद होते रहते हैं। ये समस्या केवल कबीर के समय की नहीं बल्कि अब भी ऐसा होता हुआ नजर आता है। मंदिर-मस्जिद विवाद के कारण ही लोगों के बीच होनेवाली हिंसा और निर्दोषों की मौत पर भी कबीर बहुत दुखी है। वे इसी कारण राम-रहीम दोनों को एक ही मानकर निराकार ईश्वर की पूजा करते हैं। तत्कालीन समय में धर्म के विखंडन और अलगाव प्रवृत्ति पर सचेत करते हुए कबीर दास कहते हैं-

''कहै कबीर चेतहु रे भौंदू, बोलन हारा तुरक न हिंदू।''



महत्वपूर्ण बिंदु

- ज्ञानमार्गी कबीर दास अंधविश्वास, ढोंग, पाखंड तथा छुआछुत के कट्टर विरोधी थे। वे लोगों को जीवन के वास्तविक सुख का अनुभव करना चाहते थे। उनका लक्ष्य समाज को सुधारना तथा जागरूक करना था।

कबीर दास ने अपने समाज में जिन-जिन समस्यायों का सामना किया हैं, उनके पदों में उन सबका वर्णन मिलता है। इसलिए कबीर दास आज अधिक प्रभावशाली और प्रासंगिक भी जान पड़े हैं। कबीर का धर्म विशुद्ध भावमूलक और मानवतावादी है। कबीर दास ने छह सौ साल पहले जो संघर्ष छेड़ा था, उसे ही आज आगे बढ़ाने की जरुरत है। मनुष्य के बीच गर्व और दंभ, पाखंड और द्वेष की दीवारे खड़ी करके मानवता को अलग-अलग टुकड़ों में काटकर तितर-बितर कर देनेवाले सभी चीजों का उन्होंने विरोध किया है।

पुरोहित पंडितों तथा मुल्लाओं के लिए धार्मिक आधार पर समाज को शोषण करने का सबसे बड़ा साधन था 'पुस्तकीय ज्ञान और धर्म साधना के विविध विधान आदि'। तत्कालीन समय में वेद, पुराण एवं विभिन्न शास्त्रों के ज्ञान कुछ विशेष व्यक्ति या वर्ग के पास ही सीमित होता था। शास्त्र के अध्ययन से अधिकांश जनता संसाधनों के अभाव के कारण वंचित थे। शूद्रों तथा स्त्रियों के लिए वेद का अध्ययन तो लगभग वर्जित ही था। सामान्य रूप से अंत्यजों तथा स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था तो पूरे मध्यकाल में चौपट ही थी। उन धर्म-ग्रंथों का अध्ययन कर उच्च जात के लोग अपनी सुविधा के लिए इसका प्रयोग करते थे। कबीर दास जी इसलिए शास्त्रज्ञान को महत्व नहीं देते थे। उनके शब्दों में-

'पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।'

कबीर दास हिंदू और मुसलमान दोनों को पाखंडों के प्रति सचेत करते हुए कहते हैं-

'पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजू पहाड़।
ताते यह चक्की भली जो,पीस खाय संसार।।'

कबीर दास अपने समय के समाज के भिन्न समस्याओं को लेकर सचेत थे। जिस तार्किक और वैज्ञानिक दृष्टि से आज हम रीतिरिवाजों की सार्थकता एवं औचित्य की परख करते हैं ठीक उसी दृष्टि से कबीर ने भी पारिवारिक संबंधों की औपचारिकताओं का भंडाफोड़ करते हैं। निर्धनता तथा अति गरीबता में जीने वाले लोगों के लिए मृत्यु भोज या श्राद्ध भोज की अनिवार्यता कितनी पीड़ादायक एवं कष्टसाध्य होती है, ये उनके पदों से स्पष्ट होता है। पुत्र का पिता के प्रति कैसा व्यवहार होना चाहिए, उसके लिए भी समाज ने आदर्श निर्धारित कर रखा है। किंतु व्यावहारिक धरातल पर आदर्श बराबर ही खंडित होते रहते हैं। जीवित पिता के प्रति पुत्र अपने व्यवहार में तब भी चूक करते थे और आज भी करते हैं किंतु मरणोपरांत तरह-तरह के लोकाचारों का पालन करते हैं। वेद और धर्म ग्रंथ इन लोकाचारों को पूरा समर्थन करते हैं। कबीर दास ने समाज की आर्थिक व्यवस्था तथा सामंती शोषण का भी घोर विरोध किया है। ये व्यवस्था आज भी ख़तम नहीं हुई हैं कही कही ये सभी चीजे हमारे सामने नजर आ पड़ती हैं। कबीर दास ने इन सब समस्याओं के खिलाफ उसी समय आवाज उठाकर समाज को सचेत करने का प्रयास किया था।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. क्या कबीर दास समाज सुधारक थे ?

प्रश्न 2. कबीर दास की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए ?

प्रश्न 3. क्या कबीर के विचार व्यावहारिक थे ?

धन-संपत्ति की दीवारे एक व्यक्ति को दूसरे से अलग कर देते हैं। धन और यश रूपी माया अहंकार को बढ़ावा देती है। हर तरह की सामाजिक अपराधों के पीछे धन का ही अधिक महत्व रहता है। इसी तरह मध्यकाल में सुंदरियों के पीछे भी भयानक संघर्ष होते रहते थे। सामंतों की भोगेच्छा की तृप्ति के लिए कामनी और कंचन दोनों की आवश्यकता होती थी। मतलब सूरा और सुंदरी उनके विलासिता का मूलाधार था। कबीर को यह रहस्य बहुत गहराई से सूझ गया था, इसीलिए वे जीवन पर्यंत कामिनी और कंचन से दूरी बनाए रहें। उनकी इच्छा थी कि समाज में रहने वाले लोगों में पारस्परिक ईर्ष्या, बैर का अंत हो, परस्पर प्रेम हो, हर कार्य व्यक्ति स्वार्थ रहित हो। पुत्र और परिवार की सुख-समृद्धि के लिए हर व्यक्ति बुरे तथा पाप से मुक्त हो, क्योंकि कर्म का जो फल होगा उसे कर्ता को भोगतना ही पड़ेगा, परिवार के लोग इसमें साथ नहीं देंगे-

'कुटंब कारणी पाप कमावै, तूं जौनै घर मेरा।
ए सब मिले आप सवारथ, इहां नहीं को तेरा।।'

इस तरह कहा जा सकता हैं कि कबीर दास ने अपने वाणियों के माध्यम से समाज को

एक नए रूप देने की कौशिश की। इन सब को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि कबीर दास के समाज सुधार की भावना मूलत: मानवतावादी और लोक-मंगलकारी है।

6.4 कबीर के पद (मूल पाठ)

मोकों कहाँ ढूँढ़े बंदे, मैं तो तेरे पास में।
ना मैं देवल ना मैं मसजिद, ना काबे कैलास में।
ना तो कौने क्रिया-कर्म में, नहीं योग बैराग में।
खोजी होय तो तुरतै मिलिहौं, पल भर की तालास में।
कहैं कबीर सुनो भई साधो, सब स्वाँसों की स्वाँस में।।

संतों भाई आई ग्याँन की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उडाँनी, माया रहै न बाँधी।।
हिति चित की वै यूँनी गिराँनी, मोह बलिंडा तूटा।
त्रिस्नाँ छाँनि परि घर ऊपरि, कुबधि का भाँडाँ फूटा।।
जोग जुगति करि संतों बाँधी, निरचू चुवै न पाणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।।
आँधी पीछै जो जल बूठा, प्रेम हरि जन भींनाँ।
कहें कबीर भाँन के प्रगटे उदित भया तक खीनाँ।।

शब्दार्थ : काबा-मुसलमानों का तीर्थ स्थल, छाँनि-छप्पर, भाँडाँ-बर्तन।



6.5 पद का सारांश

मनुष्य जीवन-भर ईश्वर को प्राप्त करने के लिए नाना प्रकार की क्रियाएँ करते रहते हैं, पर उसे प्रभु के दर्शन नहीं होते हैं। इस संबंध में वे कहते हैं कि हे मनुष्य तुम्हें ईश्वर की खोज करना व्यर्थ हैं, क्योंकि ईश्वर सबके शरीर के अंदर विद्यमान हैं। कबीर के अनुसार ईश्वर किसी मंदिर-मस्जिद या देवालय में नहीं हैं और न ही किसी तीर्थ स्थान पर निवास करते हैं। जो सच्चे मन से ईश्वर को खोजता है उसे ही ईश्वर की प्राप्ति होती हैं। अगर ईश्वर को सही मायने में खोजना है तो उन्हें हमें अपने भीतर ही खोजना है। शुद्ध मन से कही भी, कभी भी ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।

भक्ति के लिए ज्ञान कि भी आवश्यकता बहुत महत्वपूर्ण है। कबीर दास ने ज्ञान के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि 'हे संतों! ज्ञान की आँधी आई है, जिनके प्रभाव से भ्रम का आवरण उड़ने लगे हैं।' असल में ज्ञानी व्यक्ति ही जीवन में सही निर्णय लेने में सक्षम होता है। इसी कारन कबीर ने ज्ञान को माया से बहुत ऊपर मानते हुए कहा है 'ज्ञान को माया रुपी

रस्सी से बँधा नहीं जा सकता'। लोगों में ज्ञान का प्रकाश फैल जाने से स्वार्थ के खंभे तथा मोह का अंधकार छुट जाता है। तृष्णा का छप्पर गिरने से कुबुद्धि के सभी बर्तन टूट जाते हैं। संतों ने योग-साधना के उपायों से नए मजबूत छप्पर को बनाया जिससे तनिक भी पानी नहीं टपकता है। जब संतों को प्रभु का मर्म पता चला, तब उनका शरीर निष्कपट हो गया। इस ज्ञान रूपी आँधी के कारण प्रभु-भक्ति की जो वर्षा हुई उससे हर कोई हरि के प्रेम में भीगने लगा हैं।

कबीर के शब्दों में इस तरह कह सकते है कि ज्ञान के सूर्योदय से संतों के मन का अंधकार (अज्ञानता) समाप्त हो जाता है।



6.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : कबीर दास पहले समाज सुधारक थे, बाद में कवि। इस उत्तर को जानने के लिए इस इकाई को ध्यान से अध्ययन कीजिए।

प्रश्न 2 का उत्तर : पाने के लिए कबीर के समाज सुधार के कथ्य को पढ़िए।

प्रश्न 3 का उत्तर : हा! कबीर दास व्यावहारिक थे। उनके व्यावहारिकता का प्रमाण उनके पदों से ही मिल जाता है।



6.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. कबीर, (संपा.) हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिंदी ग्रंथ ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।



6.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. साधू से क्या पूछनी चाहिए?
2. क्या भक्ति के लिए ज्ञान की आवश्यकता जरुरी है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. कबीर के समाज सुधार की भावनाओं पर प्रकाश डालिए।
2. कौनसी आंधी आ जाने से लोगों का भ्रम टूट जाता है- सतर्क उत्तर दीजिए।
3. उल्लेखित पदों में निहित संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
4. संतों भाई आई ज्ञान की आँधी रे-ज्ञान की आँधी कहकर कबीर दास जी क्या कहना चाहते हैं?

*** ***** ***

इकाई 7 : सूरदास (भ्रमरगीत सार)-1

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 सूरदास: सामान्य परिचय

7.4 मूल पाठ (भ्रमरगीत सार)

7.5 पद का सारांश

7.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने क्या सीखा

7.7 प्रगति विवरन (केवल रूपरेखा)

7.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

7.9 अभ्यास प्रश्न

7.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जानेंगे-

- सूरदास के जीवन और उनके साहित्य के बारे में
- सूरदास की भक्ति-भावना और भ्रमरगीत के बारे में
- उनके पद में निहित शैली तथा पद में निहित काव्य-संवेदना के बारे में।

7. 2 प्रस्तावना

भ्रमरगीत भारतीय काव्य साहित्य की एक पृथक काव्यपरम्परा है। हिन्दी में सूरदास, नंददास, परमानंददास, मैथिलीशरणगुप्त और जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' जी ने भ्रमरगीत की रचना की हैं। भारतीय साहित्य में 'भ्रमर' (भौंरा) को रसलोलुप नायक का प्रतीक माना गया है। वह व्यभिचारी है जो किसी एक फूल का रसापान में ही सीमित नहीं रहता, अपितु विविध पुष्पों का रसास्वादन करता है। ब्रजभाषा काव्य में भ्रमरगीत परम्परा के कई ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। विद्वान इस परम्परा का प्रारम्भ 'मैथिल कोकिल' विद्यापति के पद से मानते हैं, किन्तु विधिवत रूप में भ्रमरगीत परम्परा की शुरूआत सूरदास से ही प्रारम्भ हुई थीं।

सूरदास के 'सूरसागर' इस सन्दर्भ में विशेष महत्व रखता है। इसके विषय में आचार्य शुक्ल ने कहा है, सूरसागर का सबसे मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्ध्यपूर्ण अंश भ्रमरगीत है। आचार्य शुक्ल ने लगभग 400 पदों को सूरसागर के भ्रमरगीत से निकालकर उनको 'भ्रमरगीत सार' के रूप में संकलित किया।

7.3 सूरदास का सामान्य परिचय

सूरदास का जन्म कब हुआ इसी बात को लेकर विद्वानों में मतभेद हैं। लेकिन अधिकांश विद्वान उनका जन्म 1478 ई. में दिल्ली के पास सीही नामक ग्राम में मानते हैं। कहा जाता है कि सूरदास के पिता, रामदास सारस्वत के प्रसिद्ध गायक थे। सूरदास के जन्मांध होने के विषय में भी अनेक मत प्रचलित हैं, प्रारंभ में सूरदास आगरा के समीप गऊघाट पर रहते थे। वहीं उनका भेंट श्री वल्लभाचार्य से हुआ और सूरदास ने वल्लभाचार्य की शिष्यत्व ग्रहण किए।

'श्री गुरु बल्लभ तत्व सुनायो लीला भेद बतायो।'

वल्लभाचार्य ने उनको पुष्टिमार्ग में दीक्षित करके कृष्णलीला के पद गाने का आदेश दिया था। गोवर्धन के निकट पारसैली ग्राम में 1583 ई. में सूरदास का देहांत हो गया था।

सूरदास की आयु 'सूरसारावली' के अनुसार उस समय 67 वर्ष थी। 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' के आधार पर उनका जन्म रुनकता अथवा रेणु का क्षेत्र (वर्तमान जिला आगरान्तर्गत) में हुआ था। मथुरा और आगरा के बीच गऊघाट पर ये निवास करते थे। बल्लभाचार्य से इनकी भेंट वहीं पर हुई थी। 'भावप्रकाश' में सूर का जन्म स्थान सीही नामक ग्राम बताया गया है। वे सारस्वत ब्राह्मण थे और जन्म के अंधे थे। श्यामसुन्दर दास, हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वानों ने इस सम्बन्ध में लिखा है- 'सूर वास्तव में जन्मांध नहीं थे, क्योंकि शृंगार तथा रंग-रुपादि का जो वर्णन उन्होंने किया है वैसा कोई जन्मान्ध नहीं कर सकता।'

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है- 'सूरसागर के कुछ पदों से यह ध्वनि अवश्य निकलती हैं कि सूरदास अपने को जन्म का अंधा और कर्म का अभागा कहते हैं, पर सब समय इसके अक्षरार्थ को ही प्रधान नहीं मानना चाहिए।' मगर 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता में सूर के अंधे होने और साथ ही दिव्य दृष्टि संपन्न होने की कुछ कथाएँ मिलती हैं । खेर बात जो भी हो सूरदास अंध तो थे, इस पर कोई संदेह नहीं है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. निम्नलिखित में से कौन भ्रमरगीत परंपरा में नहीं आते हैं?

1. नंददास
2. परमानंददास
3. मैथिलीशरणगुप्त
4. रामकुमार वर्मा

प्रश्न 2. भक्ति साहित्य में सूर की भ्रमरगीत के महत्व पर प्रकाश डालिए।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हस्तलिखित पुस्तकों की विवरण तालिका में सूरदास के 16 ग्रंथों का उल्लेख हैं। यथा- सूरसागर, सूरसरावली, साहित्य लहरी, नल-दमयन्ती,

ब्याहलो के अतिरिक्त दशमस्कंध टीका, नागलीला, भागवत, गोवर्धन लीला, सूरपचीसी, सूरसागर सार, प्राणप्यारी, आदि ग्रंथ सम्मिलित हैं। इनमें से प्रारंभ के तीन ग्रंथ ही महत्वपूर्ण समझे जाते हैं, 'साहित्य लहरी' की प्राप्त प्रति में बहुत प्रक्षिप्तांश जुड़े हुए हैं।

'साहित्य लहरी, सूरसागर, सूर की सारावली।
श्रीकृष्ण जी की बाल-छवि पर लेखनी अनुपम चली।।'

सूरदास द्वारा लिखित ग्रंथों में से मूलत: तीन ही प्रसिद्ध हैं- सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी। 'सूरसागर' सूरदास की सबसे प्रसिद्ध रचना हैं। जिसमें सवा लाख पद संग्रहित थे। किंतु अब केवल सात-आठ हजार पद ही उपलब्ध हैं। इसके अलावा सूरसारावली और साहित्य-लहरी भी सूर की अमूल्य निधि हैं। 'सूरसागर' का मुख्य वर्ण विषय श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान रहा है। 'सूरसारावली' में कवि ने जिन कृष्ण विषयक कथात्मक और सेवापरक पदों का गान किया उन्हीं के सार रूप में उन्होंने सारावली की रचना की है। 'सहित्यलहरी' सूरदास के दृष्टिकूट पदों का संकलन हैं।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. 'सूरसागर' की काव्यभाषा क्या थी?

प्रश्न 4. भ्रमरगीत परंपरा में सूर का स्थान स्पष्ट कीजिए?

7.4 मूल पाठ (भ्रमरगीत सार-1)

आयो घोष व्योपारी।
लादि खेप गुन ज्ञान-जोग की ब्रज में आय उतारी।।
फाटक दै कर हाटक मांगत भोंरे निपट सु धारी।
धुर ही तें खोटो खायों है लये फिरत सिर भारी।।
इनके कहे कौन दह्कावै ऐसो कौन अजानी?
अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खार कूप को पानी।।
ऊधो जाहु सबार यहाँ तें बेगि गहरु जनि लावौ।
मुहँ मांग्यो पैहो सूरज प्रभु साहुहि आनि दिखावौ।।

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।
यह ब्योपार तिहारो ऊधो! ऐसोई फिरि जैहै।।
जापै लै आए हौ मधुकर ताके उर न समैहै।
दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी को अपने मुख खैहै?
मुरी के पातन के केना को मुक्ताहल दैहै।
सूरदास प्रभु गुनहि छाँड़ि कै को निर्गुन निरबैहै?

7.5 पद का सारांश

गोपियाँ आपस में कह रही हैं कि आज हमारे इन अहीरों के गाँव में एक बहुत बड़ा व्यापारी आया है। वह ज्ञान और योग के गुणों से संपन्न माल की खेप को लादकर आया है, जिसे उसने ब्रज में लाकर ही उतार दिया है। उसने यहाँ के लोगों को इतना भोला समझ रखा है कि रीति-थोथी वस्तुरुपी योग की बातें देकर, बदले में गोपियों से स्वर्ण रूपी कृष्ण के प्रेमभाव को दूर भगायेगा। प्रारंभ से ही इसने अपने इस व्यापार में हानि उठायी है क्योंकि इसका माल खोता है इसलिए सर पर बोझ लादे इधर-उधर घूम-फिर रहा है। यहाँ ब्रज में ऐसा कौन अज्ञानी है जो इसकी बातों में आकर धोखा खायेगा। अपने घर का मीठा दूध त्याग कर ऐसा कौन मुर्ख होगा जो खारी कुंए का पानी पिएगा। हे उद्धव! तुम यहाँ से शीघ्र ही चले जाओ, क्षण भर का भी विलंब मत करो। सूरदास जी के अनुसार गोपियाँ कहती हैं कि 'यदि तुम अपने महाजन (श्रीकृष्ण) को लाकर यहाँ हमारे दर्शन करा सकते हो, तो तुम्हें मुँह माँगा मूल्य मिल सकता है'।

कहा जाता है उद्धव बहुत बड़ा ज्ञानी है। गोपियाँ उद्धव के ज्ञान योग पर व्यंग्य करती हुई उनसे कह रही हैं कि हे उद्धव! तुम्हारा योग रूपी ठगी का सौदा यहाँ ब्रज में नहीं चलेगा। तुम्हारा व्यापार यहाँ ऐसे ही लुट जायेगा। भौंर की ओर इंगित करते हुए गोपियाँ कहती हैं कि तुम जो हम ब्रजनारियों के लिए यहाँ लेकर आए थे उनके मन ये रुचिकर में नहीं लगेगा क्योंकि उनके हृदय में कृष्ण समाए हुए हैं, यहाँ ऐसा कौन मुर्ख है जो दाख मुनक्का छोड़कर अपने मुख में कड़वे स्वाद वाली निबौरी खायेगा। कृष्ण प्रेम दाख हैं तो ज्ञान-योग कटु निबौरी। तथा ऐसा कौन मुर्ख होगा जो मुली के पत्ते के बदले में मोती देगा। सूरदास के अनुसार गोपियाँ कहती हैं कि सगुण श्रीकृष्ण का परित्याग करके निराकार ब्रह्म की आराधना और ज्ञान योग का निर्वाह कोई नहीं करेगा।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 5. अहीरों के गाँव में एक बहुत बड़ा ... आया है। रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

प्रश्न 6. गोपियों के अनुसार निर्गुण का स्वरुप क्या हैं?



7.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने क्या सीखा

प्रस्तुत अध्याय से हमनें सीखा कि सूरदास की गोपियाँ अपने प्रियतम कृष्ण को दिल में समेटे हुए हैं। ज्ञानमार्गी उपदेशक कृष्ण के सखा उद्धव के प्रति गोपियाँ विविध प्रकार से व्यंग्य करती हैं। गोपियों को उद्धव का उपदेश न ही अच्छी लगी और न उन्हें उद्धव को अच्छा लगा । गोपियाँ भौंर के माध्यम से उद्धव को उपहास करते हुए योग की शिक्षा को नकारती है।

7.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : रामकुमार वर्मा

प्रश्न 2 का उत्तर : भ्रमरगीत परंपरा से संबंधित पुस्तकों का अध्ययन कीजिए।

प्रश्न 3 का उत्तर : ब्रज।

प्रश्न 4 का उत्तर : भ्रमरगीत परंपरा और सूरदास के बारे में जानने की कौशिश कीजिए।

प्रश्न 5 का उत्तर : व्यापारी।

प्रश्न 6 का उत्तर : जानने के लिए इस इकाई को ध्यान से पढ़िए।

7.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. भ्रमरगीत सार- आचार्य रामचंद्र शुक्ल (संपा.), गोपालदास, सुंदर दास, साहित्य सेवा सदन, बनारस।

7.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हस्तलिखित पुस्तकों की विवरण तालिका में सूरदास के कितने ग्रंथों का उल्लेख मिलता हैं ?
2. सूरदास की प्रसिद्धि किन तीन ग्रंथों को जाता हैं ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. सूरदास का जीवन परिचय और साहित्य संसार पर आलोचना कीजिए ?
2. उल्लेखित पदों की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
3. गोपियों ने उद्धव को किसके साथ तुलना की है ? गोपियों की संवेदना पर एक आलेख प्रस्तुत कीजिए।
4. सप्रसंग व्याख्या कीजिए-

   जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै।
   यह ब्योपार तिहारो ऊधो ! ऐसोई फिरि जैहै।।
   जापै लै आए हौ मधुकर ताके उर न समैहै।
   दाख छाँड़ि कै कटुक निबौरी को अपने मुख खैहै ?

*** ***** ***

इकाई 8 : सूरदास (भ्रमरगीत सार-2)

इकाई की रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 सूरदास की काव्यगत विशेषता

8.4 मूल पाठ (भ्रमरगीत सार के पद)

8.5 पद का सारांश

8.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने क्या सीखा

8.7 प्रगति विवरन (केवल रूपरेखा)

8.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

8.9 अभ्यास प्रश्न

8.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- सूरदास के काव्यगत विशेषता के बारे में जान पाऐंगे
- सूरदास के भ्रमरगीत में निहित सगुण-निर्गुण की धारणाओं को समझ सकेंगे
- उनके पद में निहित काव्य-संवेदना से भी परिचय प्राप्त करेंगे।

8. 2 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य जगत में भ्रमरगीत काव्य के मूलस्रोत, श्रीमद्भागवत पुराण से माने जाते हैं, जिसके दशम स्कंध के 46वें एवं 47वें अध्याय में भ्रमरगीत प्रसंग हैं। श्रीकृष्ण ब्रज के गोपियों को छोड़कर मथुरा चले जाते हैं जिसके कारण दुखी होकर गोपियाँ विरह-विकल तथा व्याकुल हो उठती हैं। कृष्ण मथुरा में लोकहितकारी कार्यों में व्यस्त थे, किन्तु उन्हें भी ब्रज की गोपियों की याद सताते रहते थे। इसी कारण उन्होंने अपने अभिन्न मित्र उद्धव को संदेशवाहक के रूप में गोकुल भेजते हैं। वहाँ गोपियों के साथ उनकी बातें हो रही थी तभी एक भ्रमर वहाँ उड़ता हुआ आ जाता है। गोपियों ने उस भ्रमर को प्रतीक बनाकर अन्योक्ति के माध्यम से उद्धव और कृष्ण पर जो व्यंग्य किया एवं उपालम्भ दिए उसी को हिंदी जगत में 'भ्रमरगीत' के नाम से जाना गया है। भ्रमरगीत प्रसंग में निर्गुण का खण्डन, सगुण का मण्डन तथा ज्ञान एवं योग की तुलना में प्रेम और सगुण भक्ति को श्रेष्ठ ठहराया गया है। भ्रमरगीत में गोपियों की वचनवक्रता अत्यंत मनोहारिणी एवं प्रभावशाली है। ऐसा सुंदर उपालंभ काव्य और अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। सूरदास के 'भ्रमरगीत' हिंदी साहित्य में अपना एक विशेष महत्व रखता है।



महत्वपूर्ण बिंदु

- सूरदास वात्सल्य और शृंगार रस के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्हें वात्सल्य रस का सम्राट कहा जाता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में वात्सल्य रस का प्रयोग बहुत ही तन्मयता से की है।

8.3 सूरदास की काव्यगत विशेषता

सूरदास के काव्य में कई विशेषताएँ नजर आती हैं। जिन्हें हम निम्न प्रकार से देख सकते हैं-

1. सूरदास के अनुसार भगवान श्रीकृष्ण के अनुग्रह से मनुष्य को सद्गति मिल सकते हैं। गहन-भक्ति ज्ञान, योग से श्रेष्ठ है।
2. सूर ने वात्सल्य, शृंगार और शांत रसों को मुख्य रूप से अपनाया है। सूर ने अपनी कल्पना और प्रतिभा के सहारे कृष्ण के बाल्य-रूप का अत्याधिक सुंदर, सजीव और मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है। बालकों की चपलता, स्पर्धा, अभिलाषा, आकांक्षा तथा नटखटपन का वर्णन करते हुए कृष्ण की बाल-स्वरूप का मोहक चित्रण प्रस्तुत किया है। बाल-कृष्ण की एक-एक चेष्टा के चित्रण में कवि ने कमाल की होशियारी एवं सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचय दिया है-

   'मैया कबहिं बढैगी चौटी ?
   किती बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी।'
3. सूर के कृष्ण 'प्रेम और माधुर्य' के प्रतिमूर्ति हैं। जिनकी अभिव्यक्ति बड़े ही स्वाभाविक और सजीव रूप में सुर के काव्य में प्रतिफलित हुई है।
4. ब्रज भाषा को एक शुद्ध साहित्यिक रूप देकर सुर ने कोमलकांत पदावली, भावानुकूल शब्द-चयन, सार्थक अलंकार-योजना, धारावाहीक प्रवाह, संगीतात्मकता एवं सजीवता सूर की भाषा शैली बड़ी ही मनोरमता के साथ वर्णन किया है।
5. सूरदास ने भक्ति के साथ शृंगार को जोड़कर उनके संयोग-वियोग पक्षों का जैसा वर्णन किया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।
6. सूरदास ने विनय के पद भी रचे हैं, जिसमें उनकी दास्य-भावना कहीं-कहीं तुलसीदास से भी बढ़कर दिखाई पड़ती है। उदहारण-

   'हमारे प्रभु औगुन चित न धरौ।
   समदरसी है मान तुम्हारौ, सोई पार करौ।'
7. सूर ने स्थान-स्थान पर कूट पद भी लिखे हैं।
8. प्रेम के स्वच्छ और मार्जित रूप का जैसा चित्रण भारतीय साहित्य में वर्णन किया है, ऐसा किसी और कवि ने नहीं किया है। वियोग के समय राधिका का जो चित्र सूरदास ने

चित्रित किया है, वे इस प्रेम के योग्य हैं।

9. सूर ने यशोदा आदि के शील, गुण आदि का भी सुंदर चित्रण किया है।
10. सूर के भ्रमरगीत वियोग-शृंगार के ही उत्कृष्ट ग्रंथ नहीं है, अपितु उसमें सगुण और निर्गुण के स्पष्ट छवि भी झलकती हैं। विशेषत: उद्धव-गोपी संवादों में हास्य-व्यंग्य के अच्छे छींटें भी यहाँ मिल जाते हैं।
11. सूर काव्य में प्रकृति-सौंदर्य के सूक्ष्म और सजीव वर्णन उपलब्ध होते है।
12. सूर की कविता में पुराने आख्यान और कथनों का उल्लेख स्थान-स्थान पर मिल जाता हैं।
13. सूर के गेय पदों में हृदयस्थ भावों की अत्यंत सुंदर व्यजना हुई हैं। कृष्ण-लीला संबंधी पदों में सूर के भक्त और कवि हृदय की सुंदर झाँकी दिखाई पड़ते हैं।
14. सूर के काव्य की महानता भाव-पक्ष की दृष्टि से ही नहीं, कला-पक्ष की दृष्टि से भी है। सूर की भाषा सरल, स्वाभाविक, आकर्षक तथा वाग्वैदिग्धपूर्ण तो है ही, अलंकार-योजना की दृष्टि से भी उनके कला-पक्ष पूर्ण रूप से शक्तिशाली हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने सूर की कवित्व-शक्ति के बारे में लिखा है- 'सूरदास जब अपने प्रिय विषय का वर्णन शुरू करते हैं तो मानो अलंकार-शास्त्र हाथ जोड़कर उनके पीछे-पीछे दौड़ा करता है। उपमाओं की बाढ़ आ जाती हैं, रूपकों की वर्षा होने लगती हैं।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूरदास हिंदी साहित्य के उन महान कवियों में से एक हैं, जिन्होंने न केवल भाव और भाषा की दृष्टि से ही साहित्य को सुसज्जित किया, वरन् कृष्ण-काव्य की विशिष्ट परंपरा का सृजन कर उसे लोगों के घर-घर तक को पहुँचाया भी है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. सूरदास के काव्य में नजर आनेवाली रसों में प्रमुख नहीं है?

1. वात्सल्य
2. शृंगार
3. शांत
4. वीभत्स

प्रश्न 2. भ्रमरगीत के मूल स्रोत किस पौराणिक ग्रन्थ से माने गए हैं?

8.4 मूल पाठ (भ्रमरगीत सार)

आएजोग सिखावन पांड़े।
परमारथी पुराननि लादे ज्यों बनजारे टाँड़े।
हमारी गति पति कमल नयन जोग सीखे ते राँडे।

कहौ, मधुप, कैसे समयँगे एक म्यान दो खाँड़े।।
कहु षटपद, कैसे खैयतु है हाथिन के सँग गाँड़े।
काको भूख गई बयारि भखि बिना दूध घृत माँड़े।।
काहे को झाला लै मिलवत, कौन चोर तुम डाँड़े।
सूरदास तीनों नहिं उपजल धनिया धान कुम्हाँड़े।।

ए अलि! कहा जोग में नीको?
तजि रस-रीति नंदननंदन की सिखवत निर्गुन फीको।।
देखत सुनत नाहि कछु स्त्रवननि, ज्योति ज्योति करि ध्यावत।
सुंदर स्याम दयालु कृपानिधि कैसे हौ बिसरावत?
सुनि रसाल मुरली-सुर की धुनि सोइ कौतुक रस भूलैं।
अपनी भुजा ग्रीव पर मेलैं गोपिन के सुख फुलैं।।
लोककानि कुल को भ्रम प्रभु मिलि-मिलि कै घर बन खेली ।
अब तुम सुर खवावन आए जोग जहर की बेली।।

8.5 पद का सारांश

गोपियाँ उद्धव को व्यंग्यता से पंडितजी कहकर कहती हैं कि हे परमार्थजी! तुम हमें योग की शिक्षा देने आए हो। तुम पुराणादि के विचारों को अपने मस्तिष्क में वैसे ही लादे हुए हो जैसे कोई बनजारा अपने टूटे-फूटे व्यर्थ के सामान को लादे फिरता है। हमारी गति तो हमारे कमल नयन वाले पति के अनुसरण में ही है। परंतु तुमसे अगर योग की शिक्षा ले लिया जाय तो हम विधवा हो जायेंगे। भ्रमर के माध्यम से उद्धव से पुन: बोलती है कि हे भौंरे! तू ही बता कि एक म्यान में दो तलवार कैसे रह सकती हैं? तू फलों के रस तो चूस सकता है, लेकिन हाथियों के साथ गन्ने कैसे खाएगा? तुम निर्गुण भक्ति में प्राणायाम एवं वायु भक्षण की शिक्षा देते तो हो, पर तुम बतलाओं कि बिना दूध घी और भोजन के किसकी भूख शांत हुई है? तुम व्यर्थ की बाते मत करो। यहाँ चोर कौन है, जिसने तुम्हारे ज्ञान को चुराया है और तुम साहूकार बनकर दंड दे रहे हो। सूरदास जी का कहना है कि गोपियों का जो बोलना है तुम सुन लो, एक ही स्थान पर धनिया, धान और बेलों में लगने वाले कद्दू पैदा नहीं हो सकते। उसी तरह ब्रजभूमि पर तुम्हारा प्रभाव, योग की शिक्षा और श्रीकृष्ण के प्रति हमारे प्रेम तीनों एक साथ नहीं रह सकते । यहाँ तो कृष्ण का प्रेम ही सर्वोपरि है। कोई योग यहाँ कुछ असर नहीं डाल सकता।

गोपियाँ उद्धव रूपी भौंरे को कहती हैं- तू ही बता कि योग की शिक्षा में क्या अच्छा है? तुम तो नंद के नंदन श्रीकृष्ण से हमारे रससिक्त प्रेम को अलग करके हमें निर्गुण योग की शिक्षा देने आए हो। तुम्हारे निराकार ब्रह्म को हम न ही देख पाते हैं और न हम उनकी वाणी को सुन सकते हैं क्योंकि वह ज्योति स्वरुपा है।

गोपियाँ कहती है कि, हम कृष्ण के रसमय मूरली की ध्वनि सुनकर सब कुछ भूल जाते हैं। मुहमारे सुखों की उस समय कोई सीमा नहीं रहती। हम सबकी लोक मर्यादा एवं कुलीनता का भय घर, बाहर सभी जगह, उस समय मिट जाता है; जब हम अपने प्रियतम कृष्ण के साथ लीला करते है। सूरदास गोपियों के माध्यम से उद्धव से कहते है कि हे उद्धव! तुम हमारे प्रेमपूर्ण रससिक्त जीवन को योगरुपी जहर की बेल को खिलाने आए हो जो सर्वथा हम ब्रजवासियों के लिए विनाशक सिद्ध है। जिसमें तुमको किसी कारन से भी सार्थकता नहीं मिलेगा।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. कृष्ण के प्रति गोपियों का प्रेम कैसा हैं?



8.7 प्रस्तुत अध्याय से हमने क्या सीखा

इस अध्याय से हमने सीखा कि उद्धव जिस निर्गुण ब्रह्म की धारणाओं को लेकर गोपियों के पास आए थे, वह ब्रज में असार तथा मूल्यहीन सिद्ध हुआ। उनका ज्ञान, योग, पांडित्य सब साधारण गोपियों के सामने निरथर्क हो गया। गोपियाँ उनके सगुण साकार कृष्ण के प्रेम में ही व्याकुल हैं, जिसके लिए वे अपनी लोकलज्जा तक खोने के लिए भी नहीं डरते।



8.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : वीभत्स।

प्रश्न 2 का उत्तर : सूरदास के काव्यगत विशेषताओं को ध्यान से पढ़े।

प्रश्न 3 का उत्तर : इकाई को पढ़कर और समझकर ध्यानपूर्वक लिखिए।



8.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. भ्रमरगीत सार- आचार्य रामचंद्र शुक्ल (सम्पा.), गोपालदास, सुंदर दास, साहित्य सेवा सदन, बनारस।

(



8.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. गोपियाँ क्यों व्याकुल हो उठती है ?
2. मैया कबहिं बढ़ैगी चौटी ?- ऐसा किसने कहा था ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. सूरदास के काव्यों में निहित विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।
2. गोपियाँ उद्धव को किस तरह उपहास करती हैं ? प्रस्तुत पद के आधार पर उल्लेख कीजिए।
3. स्पष्ट कीजिए कि गोपियों के कृष्ण प्रेम के आगे उद्धव का ज्ञान कैसे असार सिद्ध हुआ ?
4. हमारी गति पति कमल नयन जोग सीखे ते राँडे
   -यहाँ कमल नयन से क्या तात्पर्य है और किसका नयन कमल जैसा है ?

*** ***** ***

इकाई 9 : तुलसीदास-1

इकाई की रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 तुलसीदास का सामान्य परिचय

9.3.1 जन्म-परिचय

9.3.2 साहित्यिक परिचय

9.4 लक्ष्मण-परशुराम संवाद (मूलपाठ)

9.5 पाठ का सारांश

9.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

9.7 प्रगति विवरण

9.10 अधिक जानने के लिए पढ़े

9.11 अभ्यास प्रश्न

9.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जानेंगे-

- तुलसी के जीवन के बारे में
- तुलसी के साहित्य के बारे में
- उल्लेखित पद में निहित संवेदना के बारे में।

9.2 प्रस्तावना

तुलसीदास हिंदी जगत में एक साधु, महान कवि, साहित्यकार एवं दार्शनिक के रूप में प्रसिद्ध थे। उन्होंने अपने जीवन काल में रामभक्ति में लीन रहकर अनेक ग्रंथों की रचना की। उनके द्वारा रचित 'रामचरितमानस' एक पुरातन पौराणिक बहु प्रसिद्ध ग्रंथ है। जिसे महाकाव्य के रूप में भी जाने जाते हैं। तुलसीदास जी भगवान राम के सच्चे भक्त एवं अनुयायी थे।

9.3 तुलसीदास का सामान्य परिचय

तुलसीदास को हिंदी साहित्य के सगुण भक्ति धारा के अंतर्गत रामभक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। राम के प्रति पूर्ण समर्पण उनके काव्य की प्रमुख विशेषता रही हैं। आइए, तुलसीदास के जीवन और साहित्य के बारे थोड़ा बहुत जान लेते हैं।

9.3.1 जन्म-परिचय

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म 1511 ईसवीं में कासगंज, उत्तर प्रदेश के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। लेकिन कुछ विद्वान मानते हैं कि तुलसी दास जी का जन्म राजापुर जिले के चित्र कूट में हुआ था। मुग़ल शासक अकबर को तुलसीदास जी के समकालीन माना जाता है। तुलसीदास के पिता का नाम आत्माराम दुबे एवं माता का नाम हुलसी दुबे थे। तुलसीदास जी की माता एक आध्यात्मिक महिला एवं गृहणी थी। उनके जन्म के संबंध में एक बहुत ही चर्चित प्रसंग सुनने को मिलता है कि तुलसीदास जन्म के पूर्व 12 मास तक अपनी माँ के गर्भ में थे। अपने जन्म के साथ ही तुलसीदास ने राम नाम लेना शुरू कर दिया था। जिस कारण तुलसीदास के बचपन का नाम 'रामबोला' पड़ गया था। जन्म की यह सब घटनाएँ देख उनके आस-पास के रहने वाले लोग बहुत ही आश्चर्य चकित थे।

तुलसीदास की प्रारम्भिक शिक्षा उनके गुरु नरसिंह दास जी के आश्रय में ही हुआ। जब वे 7 वर्ष के थे, तो उनके माता-पिता ने प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा के लिए श्री अनन्तानन्द जी के प्रियशिष्य श्रीनरहर्यानन्द जी (नरहरि बाबा) के आश्रम में भेज दिया। नरसिंह बाबा जी के आश्रम में रहते हुए तुलसी ने 14 से 15 साल की उम्र तक सनातन धर्म, संस्कृत, व्याकरण, हिन्दू साहित्य, वेद दर्शन, छः वेदांग, ज्योतिषशास्त्र आदि की शिक्षा प्राप्त की। गुरु नरसिंह दास ने ही 'रामबोला' का नाम गोस्वामी तुलसीदास रखा था। शिक्षा समाप्त करने के बाद तुलसीदास अपने निवास स्थान चित्रकूट वापस आ गए थे और लोगों को राम कथा, महाभारत कथा आदि सुनाने लगे थे। तुलसीदास का विवाह बुद्धिमती नाम की एक लड़की से हुई थी। बुद्धिमती को लोग रत्नावली के नाम से जानते थे।

9.3.2 साहित्यिक परिचय

गोस्वामी तुलसीदास की प्रमाणिक रचनाएँ निम्नप्रकार हैं-

रामचरितमानस
रामललानहछू
वैराग्यसंदीपनी
बरवै रामायण
पार्वतीमंगल
जानकीमंगल
रामाज्ञाप्रश्न
दोहावली

कवितावली

गीतावली

श्रीकृष्णगीतावली

विनयपत्रिका

इतिहासकार मानते हैं कि तुलसीदास जीवन के अंतिम समय में वाराणसी में रह रहे थे। जीवन के अंतिम क्षणों में भी तुलसीदास की दिनचर्या पूरी तरह से रामभक्ति में ही लीन रहती थी। वाराणसी में 112 साल की उम्र में 1623 ईसवीं में तुलसीदास ने समाधि लेकर अपने शरीर को इस संसार से त्यागा था।



महत्वपूर्ण बिंदु

- तुलसीदास की 'रामचरितमानस' अवधी भाषा में लिखित एक प्रसिद्ध महाकाव्य है। रामचरितमानस को तुलसी कृत रामायण भी कहा जाता है। जहाँ प्रभु श्रीराम को सर्वशक्तिमान और मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में दिखाया गया है। रामचरित मानस में सात कांड हैं- बालकांड, अयोद्धाकांड, अरण्यकांड, किष्किन्धाकांड, सुंदरकांड, लंकाकांड, उत्तरकांड।

9.4 लक्ष्मण-परशुराम संवाद (मूल पाठ)

चौपाई :

लखन कहा हँसि हमरें जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना॥
का छति लाभु जून धनु तोरें। देखा राम नयन के भोरें॥ 1॥
छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोसू॥
बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा॥ 2॥
बालकु बोलि बधउँ नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही॥
बाल ब्रह्मचारी अति कोही। बिस्व बिदित छत्रियकुल द्रोही॥ 3॥
भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही॥
सहसबाहु भुज छेदनिहारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा॥ 4॥

दोहा :

मातु पितहि जनि सोचबस करसि महीसकिसोर।
गर्भन्ह के अर्भक दलन परसु मोर अति घोर॥ 272॥

चौपाई :

बिहसि लखनु बोले मृदु बानी। अहो मुनीसु महा भटमानी॥
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू॥ 1॥

इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि मरि जाहीं॥
देखि कुठारु सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना॥ 2॥
भृगुसुत समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरें कुल इन्ह पर न सुराई॥ 3॥
बधें पापु अपकीरति हारें। मारतहूँ पा परिअ तुम्हारें॥
कोटि कुलिस सम बचनु तुम्हारा। ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा॥ 4॥

9.5 पाठ का सारांश

सीता स्वयंवर में जब श्रीराम ने शिव जी के धनुष को तोड़ा, तो परशुराम अत्यंत क्रोधित हो गए। उन्होंने गुस्से में राम-लक्षण को बहुत-कुछ सुना दिया। लक्ष्मण ने परशुराम से हँसकर कहा- सुनिए देव! हमारे हिसाब से तो सभी धनुष एक जैसे ही है। पुराने धनुष के तोड़ने में क्या हानि-क्या लाभ! रामचंद्रजी ने तो उस धनुष को देखा। फिर यह तो छूते ही टूट गया, इसमें उनका कोई दोष नहीं। मुनि आप बिना कारण ही क्रोधित हो रहे हैं। परशुराम जी अपने परसु की ओर देखकर बोले, तू मुझे जानता नहीं है। अरे दुष्ट! मैं तुझे नादान बालक समझकर नहीं मार रहा हूँ। तू मुझे जानता नहीं है। अपनी भुजाओं के बल से मैंने पृथ्वी को राजाओं से रहित कर दिया है और बहुत बार उसे ब्राह्मणों को दे दिया। हे राजकुमार, मेरे इस परसु को देख। मेरा परसु बड़ा भयानक है, यह गर्भ के बच्चों का भी नाश करने वाला है। लक्ष्मण हँसकर कोमल वाणी से बोले, हे, मुनीश्वर! अपने को तो आप बहुत बड़ा योद्धा समझते हैं। भृगुवंशी समझकर और यज्ञोपवीत देखकर जो कुछ आप कह रहे हैं, उसे मैं क्रोध को रोककर सह लेता हूँ। देवता, ब्राह्मण, भगवान के भक्त और गो पर हमारे कुल में वीरता नहीं दिखाई जाती हैं। क्योंकि इन्हें मारने से पाप लगता है और इनसे हार जाने पर अपकीर्ति होती है, इसलिए आप मारें तो भी हमें आपके पेड़ ही पड़ना चाहिए। आपका ये बाण और धनुष एक समान हैं, आप व्यर्थ ही बाण और परसु धारण करते फिरते रहे हो। अगर मैंने कुछ अनुचित कहा तो, हे धीर महामुनि मुझे क्षमा कीजिएगा।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. सीता स्वयंवर में प्रभु श्रीराम ने किसका धनुष तोड़ा था?

प्रश्न 2. परशुराम किसको धमकी देते हैं?

प्रश्न 3. गोस्वामी तुलसीदास .... शाखा के महान कवि है- रिक्त स्थान पूर्ति कीजिये।



9.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- तुलसीदास हिंदी साहित्य के राम भक्ति काव्यशाखा के प्रसिद्ध कवि है।
- गोस्वामी तुलसीदास राम के अनन्य भक्त थे।
- राम अत्यंत मृदुभाषी थे। अपनी वाणी से सबके हृदय को शांत करनेवाले व्यक्तित्व के अधिकारी थे।



9.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : शिवजी का धनुष।

प्रश्न 2 का उत्तर : पाने के लिए ध्यान से पढ़िये उल्लेखित पाठ के सारांश को।

प्रश्न 3 का उत्तर : राम भक्ति शाखा के।



9.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. रामचरित मानस, तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर।



9.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. तुलसी दास का जन्म कब हुआ था ?
2. तुलसी दास के गुरु कौन थे ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. तुलसीदास का सामन्य परिचय दीजिए ?
2. तुलसीदास रचित किन्हीं एक प्रमुख कृति का नाम उल्लेख करते हुए उसकी पांच प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।
3. उल्लेखित कविता की संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
4. धनुष तोड़ने का कारण लक्ष्मण ने परशुराम को क्या कहकर- अपना तर्क उनके सामने रखे थे ?

*** ***** ***

इकाई 10 : तुलसीदास-2

इकाई की रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 तुलसीदास की भक्ति भावना

10.4 उत्तराकांड से चुने हुए पद (मूल पाठ)

10.5 पाठ का सारांश

10.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

10.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

10.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

10.9 अभ्यास प्रश्न

10.1 उद्देश्य

इस इकाई में भी हम सगुण भक्ति काव्यधारा के अन्तर्गत राम भक्ति काव्यशाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोस्वामी तुलसीदास जी के बारे में अध्ययन करेंगे। प्रस्तुत इकाई से आप जान सकते हैं -

- तुलसीदास की भक्ति भावना के बारे में
- उनकी कविता निहित भाव सौन्दर्य के बारे में
- सगुण और निर्गुण भक्ति के बारे में।

10.2 प्रस्तावना

तुलसीदास भक्तिकाल के सगुण काव्यधारा से संबंधित रामभक्ति शाखा के प्रमुख कवियों में से एक है। वे प्रकृत अर्थ में समन्वयवादी कवि थे। तुलसी मूलत: एक भक्त कवि है, जिनकी भक्ति भावना को हम निम्नाकृत रूप में देख सकते हैं-

10.3 तुलसीदास की भक्ति भावना

राम-भक्ति ही तुलसीदास के जीवन की एकमात्र साध्य रहा। प्रभु श्रीराम की भक्ति में रम कर उन्होंने जो कुछ भी लिखा वह काव्य बन गया। यही कारण है कि उनकी भक्ति-भावना का मूर्त रूप उनके सम्पूर्ण काव्य में प्रतिबिम्बित होती है।

भारतीय साहित्य में भक्ति के स्वरूप पर विस्तार से चिंतन-मनन किया गया है।

भागवत, पुराण में नौ प्रकार की भक्ति के बारे में उल्लेख किया गया है। इसे नवधा भक्ति कहा गया है। नवधा भक्ति के अंतर्गत - श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन आदि विशेषताएँ आते है।

तुलसीदास के साहित्य में नवधा भक्ति के सभी तत्व उपलब्ध हैं, लेकिन उन्होंने दास्य-भक्ति पर ही अपना ध्यान अधिक केन्द्रित किया।

तुलसीदास हमेशा खुद को राम का परम सेवक अथवा दास मानते थे और उसी दास्यभाव की प्रधानता उनके काव्य में विशेष रूप से नजर आती है। उनकी भक्ति-भावना को हम निम्नलिखित बिंदुओं में समझ सकते हैं-

सगुण-भक्ति : तुलसीदास जी सगुण भक्ति को समर्थन करनेवाले कवि थे। वे दशरथ पुत्र राम को अपना आराध्य देव मानते थे। उन्होंने श्रीराम को कोई सामान्य मानव के रूप में नहीं भगवान विष्णु के अवतार के रूप में स्वीकारा है, जो सबकी पालनहार है। उनका मानना था कि अपने भक्तों के उद्धार के लिए ईश्वर इस पृथ्वी पर समय-समय पर किसी एक रूप में अवतारित होते है। तुलसी के राम सृष्टि के कर्त्ता, धर्त्ता और संहारकर्त्ता हैं। वे दीनबंधु, भक्तवत्सल और दया के सागर है। तुलसी के प्रभु शील, शक्ति और सौंदर्य का प्रतीक तथा पराक्रमी वीर है। उसी को तुलसीदास ने परमब्रह्म कहा है।

दास्य-भाव की प्रधानता : तुलसीदास भगवान राम को सबसे बड़ा, महान तथा अपने आप को सबसे छोटा तथा तुच्छ सेवक मानते थे। उनकी संपूर्ण भक्ति इसी दास्य भाव पर प्रतिष्ठित है। वे कहते हैं -

'राम सो बड़ो है कौन मौसो कौन छोटो
राम सो खरो है कौन, मौसो कौन खोटो।'

तुलसीदास की भक्ति-भावना में दीनता की प्रमुखता है। वे अपने काव्य में बार-बार अपनी दीनता का वर्णन करते हैं। उनका मानना है कि प्रभु दीन-हीन व्यक्तियों पर शीघ्र ही कृपा करनेवाले होते हैं जो भक्तों के दुखों का निवारण करते हैं।

तुलसी जी अपने काव्य में स्वयं को सेवक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके शब्दों में भक्त और प्रभु के बीच में सेवक-सेव्य भाव होना जरुरी है। उनका मानना है कि जब तक भक्त और प्रभु में सेवक और सेव्य का भाव नहीं होगा तब तक भक्त इस भव-सागर को पार नहीं कर पायेगा। उनके शब्दों में-

'सेवक-सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि।'

सगुण और निर्गुण का समन्वय : यद्यपि तुलसीदास सगुण भक्ति में विश्वास रखते हैं, फिर भी उनके भक्ति में सगुण और निर्गुण का समन्वय साफ-साफ दिखाई देता है। कई स्थानों पर जहाँ वे श्री राम जी को विष्णु के अवतारी रूप में सगुण के तथा कहीं निराकार परमब्रह्म के रूप में चित्रित कर निर्गुण भक्ति के महत्व को प्रतिपादित किया है।

इनके अतिरिक्त वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि निर्गुण-भक्ति और सगुण-भक्ति में कोई

विशेष अधिक अंतर नहीं है। दोनों ईश्वर के कृपा प्राप्ति की साधन मात्र है। वे कहते हैं-

'सगुनहि अगुनहि नहीं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा।।'

ज्ञान और भक्ति का समन्वय : तुलसीदास अपने काव्य में ज्ञान तथा भक्ति का समन्वय प्रस्तुत करते हैं। वे मानते है कि इस संसार के दुखों से छुटकारा पाने के लिए मनुष्य के पास दो ही रास्ते हैं- ज्ञान और भक्ति। वे इन दोनों को ही समान रूप से महत्व देते थे। उनका मानना है कि ज्ञान का मार्ग तलवार की धार के समान है जिसमें हल्की सी चूक भी घातक सिद्ध हो सकता है। सगुण भक्ति के स्वरूप तथा मार्ग प्रत्येक व्यक्ति के लिए सरल और सहज है। ज्ञान और भक्ति दोनों ही इस भवसागर पार करने का एक जरिया है। वे लिखते हैं-

'भगतहिं ज्ञानहिं नहीं कछु भेदा।
उभय हरहिं भव सम्भव खेदा।'

सगुण और निर्गुण दोनों का गंतव्य स्थान एक ही है फिर भी तुलसीदास जी की दृष्टि में सगुण भक्ति ही श्रेष्ठ मानते हुए, इसे ईश्वर प्राप्ति का मूल साधन मानते हैं।

निष्कर्ष यह है कि तुलसीदास की भक्ति-भावना का मूल स्वरुप सगुण भक्ति है। वे दशरथ पुत्र राम को अपना आराध्य देव मानते हैं। राम के सगुण साकार रूप की आराधना ही उनकी भक्ति का मूल लक्ष्य है। अपने परम आराध्य के लिए तुलसीदास ने दास्य-भावना को चुना, जिसे हम उनकी भक्ति का मूलाधार कह सकते हैं।

10.4 उत्तराकाण्ड (मूलपाठ)

दोहा :

रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग।
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस तन राम बियोग॥
सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर।
प्रभु आगवन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर॥
कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस होइ।
आयउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब कोइ॥
भरत नयन भुज दच्छिन फरकत बारहिं बार।
जानि सगुन मन हरष अति लागे करन बिचार॥

चौपाई :

रहेउ एक दिन अवधि अधारा। समुझत मन दुख भयउ अपारा॥
कारन कवन नाथ नहिं आयउ।जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायउ॥ 1॥
अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिंदु अनुरागी॥

कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ताते नाथ संग नहिं लीन्हा॥ 2॥
जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलप सत कोरी॥
जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ॥ 3॥
मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई। मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई॥
बीतें अवधि रहहिं जौं प्राना। अधम कवन जग मोहि समाना॥ 4॥

दोहा :

राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत।
बिप्र रूप धरि पवनसुत आइ गयउ जनु पोत॥ 1॥
बैठे देखि कुसासन जटा मुकुट कृस गात॥
राम राम रघुपति जपत स्रवत नयन जलजात॥1॥

चौपाई :

देखत हनूमान अति हरषेउ। पुलक गात लोचन जल बरषेउ॥
मन महँ बहुत भाँति सुख मानी। बोलेउ श्रवन सुधा सम बानी॥ 1॥
जासु बिरहँ सोचहु दिन राती। रटहु निरंतर गुन गन पाँती॥
रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता। आयउ कुसल देव मुनि त्राता॥ 2॥
रिपु रन जीति सुजस सुर गावत। सीता सहित अनुज प्रभु आवत॥
सुनत बचन बिसरे सब दूखा। तृषावंत जिमि पाइ पियूषा॥ 3॥
को तुम्ह तात कहाँ ते आए। मोहि परम प्रिय बचन सुनाए॥
मारुत सुत मैं कपि हनुमाना। नामु मोर सुनु कृपानिधाना॥ 4॥
दीनबंधु रघुपति कर किंकर। सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर॥
मिलत प्रेम नहिं हृदयँ समाता। नयन स्रवतजल पुलकित गाता॥ 5॥
कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आजुमोहि राम पिरीते॥
बार बार बूझी कुसलाता। तो कहुँ देउँ काह सुन भ्राता॥ 6॥

10.5 पाठ का सारांश

श्री रामजी वनवास से लौटने की अवधी का एक ही दिन शेष रह गया था, अत: नगर के लोग बहुत ही व्याकुल हैं। राम के वियोग में बहुत से लोग उनकी चिंता करते हुए दुबले-पतले हो गए थे। ये इधर-उधर सोच-विचार कर रहे हैं कि राम लौटेंगे कब? इतने में सब शांत और शकुन होने लगा, सभी के मन प्रसन्नता भर गया। मानों सबको पता चल गया हो, कि प्रभु के शुभ आगमन का समय हो चुका था। कौशल्या आदि सभी माताओं के मन में आनंद की लहर उठने लगी थी जैसे अभी कोई कहना ही चाहती है कि सीता और लक्षण सहित प्रभु श्री राम आ पहुंचे हैं। श्री राम के भाई भरत की दाहिनी आँख और दाहिनी भुजा बार-बार फड़क रहे हैं, जिसे शुभ-शकुन मानते हुए मन में अत्यंत हर्ष तथा आनंद की महसूस कर रहा है भारत। प्राणों के आधार

स्वरूप प्रभुराम की अवधी एक दिन अभी भी शेष है; जानकर भरत के मन में अपार दु:ख होने लगता है। उन्होंने सोचा कि क्या प्रभु राम नहीं लौटनेवाले हैं? कुटिल जानकार उन्होंने कहीं मुझे भूला तो नहीं दिया है।

आह! लक्ष्मण सच में ही धन्य और भाग्यशाली है; जो हमेशा श्री रामजी के चरणों के पास होते है। अर्थात लक्षण प्रभु राम की सेवा से कभी अलग नहीं हुआ। मुझे तो शायद प्रभु ने कपटी और कुटिल मान लिया है और मानेंगे भी। यदि मेरी करनी पर प्रभु राम ध्यान देंगे तो असंख कल्पोंतक भी मेरा निस्तार नहीं होगा। मगर, क्या राम ऐसा करेगा! राम दीनबंधु और वे अत्यंत ही कोमल स्वभाव के है। प्रभु सेवक के अवगुण को कभी दिल पे नहीं लेते हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि श्री राम मुझसे मिलेंगे जरुर और इसी बात से मुझे शकुन की महसूस हो रही है। लेकिन समय जाने के बाद भी प्राण रह जाए तो संसार में मुझसे भी ज्यादा नीच कौन होगा?

राम के बिरह में भरत बहुत दुखी है। मानों उस विरह समुद्र में भरत रूपी नाव डूबने ही वाला था । मगर, पवन पुत्र हनुमान ने ब्राह्मण का रूप धारण कर इस प्रकार सामने आया कि उन्होंने भरत रूपी नाव को डूबने से बचा लिया। हनुमान ने दुर्बल शरीर के भरतजी को जटा का मुकुट बनाये राम! राम! रघुपति! जपते हुए कमल के समान नेत्रों से जल बहते हुए कुश के आसन पर बैठे देखा था। जिसे देखकर हनुमान अत्यंत आनन्दित हुए। भाई के प्रेम को देखकर हनुमान का शरीर पुलकित हो गया, नेत्रों से प्रेमाश्रु निकले और मन में बहुत प्रकार से सुख उत्पन्न हुआ, तथा भरत के लिए वे अमृत के सामान वाणी बोले। जिनके विरह में आप रात-दिन दुखी होते रहे हो, जिनके गुण-गान निरंतर करते रहे हो वे रघुकुल तिलक श्री राम सज्जनों को सुख देनेवाले, देवताओं तथा ऋषियों के रक्षक है। श्री राम जी सकुशल लौट रहे हैं। हनुमान ने यह भी बताया कि प्रभु श्री राम शत्रु को रण में हराकर सीता और लक्षण सहित वापस आ रहे हैं; उनके पराक्रम और वीरता को देखकर देवता उनकी यश बखान रहे हैं। यह सुनते ही भरत अपने सारे दु:ख को भूला देते हैं । जैसे प्यासा आदमी अमृत पाकर प्यास की पीड़ा को भूल जाता हो । भरत जी हनुमान से ये सब सुनते ही उनसे पूछते हैं कि हे तात! तुम कौन हो? और कहाँ से आये हो? जिसने मुझे परम प्रिय के गुणगान सुनाकर आनंदित किया, आप अपने बारे में बताइये! हनुमान इसके उत्तर में कहते हैं कि- मैं पवन का पुत्र और जाति का वानर हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं दीन बंधू श्री रघुनाथजी का दास हूँ। इसे सुनते ही भरत उठकर आदरपूर्वक हनुमान के गले मिले। गले मिलते समय प्रेम ह्रदय में नहीं समा पाये, नेत्रों से खुशी की आँसू बहने लगी और शरीर पुलकित होने लगा था। भरत ने बड़े ही आकुलता से कहा कि, हे हनुमान! तुम्हारे दर्शन मात्र से मेरे ह्रदय के समस्त दु:ख समाप्त हो गए। तुम्हारे कारण मुझे आज प्रभु राम के दर्शन हो जायेंगे। प्रभु श्रीराम से खुशी से मिल पाउँगा में। हे भाई ! हनुमान, तुमने मुझे जो शुभ संवाद सुनाया, बतलाओं, इसके बदले मैं तुम्हे क्या दूँ?



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. तुलसी के ज्ञान और भक्ति के समन्वय को समझाइए ?

प्रश्न 2. भरत के डूबते नौका को किसने बचाया ?

प्रश्न 3. भरत के अनुसार लक्ष्मण बड़े ही भाग्यवान और धन्य क्यों है ?



10.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- तुलसीदास जी की भक्ति 'दास्य' भाव से अधिक प्रभावित है।
- उनका काव्य 'रामचरित मानस' समन्वय का उत्कृष्ट निदर्शन है।
- राम के प्रति उनके भाइयों का प्रेम असीमित है।



10. 7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : उत्तर पाने के लिए तुलसी की भक्ति भावना को पढ़िए।

प्रश्न 2 का उत्तर : हनुमान ने।

प्रश्न 3 का उत्तर : खोजे पाठ के सारांश में।



10.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. रामचरित मानस, तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर।



10.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. क्या तुलसी भक्त कवि थे ?
2. तुलसी की भक्ति में किस भाव की प्रधानता अधिक नजर आती है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. नवधा भक्ति किसे कहते हैं? तुलसी की भक्ति भावना पर एक लेख प्रस्तुत कीजिए।
2. पठित पद के आधार पर भरत की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. उल्लेखित पंक्तियों में निहित संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
4. प्रस्तुत पदों के माध्यम से भारत और राम के प्रेम को दर्शाइए?

*** ***** ***

इकाई 11 : मीराबाई (पदावली)-1

इकाई की रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 मीरा-सामान्य परिचय

11.4 मीरा की पदावली (मूल पाठ)

11.5 पाठ का सारांश

11.6 प्रस्तुत अध्याय से हमनें सीखा

11.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

11.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

11.9 अभ्यास प्रश्न

11.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- मीराबाई के पद में अभिव्यक्त भक्तिभावना का स्वरूप
- मीराबाई के काव्यगत विशेषताएँ
- मीराबाई के प्रस्तुत पदों की रसानुभूति और आत्मसमर्पण की भावना।

11.2 प्रस्तावना

मीरा कृष्ण भक्ति काव्य-धारा के प्रसिद्ध और सोलहवीं शताब्दी की एक सशक्त महिला कवयत्री थी। मीरा ने अपना सम्पूर्ण जीवन कृष्ण के प्रति ही समर्पित कर दिया था। उनके गुरु रविदास ने उन्हें जीवन का मार्ग दिखलाया और सांसारिक मोहमाया को तुच्छ समझाया। उन्हीं के मार्ग-दर्शन पर चलते हुए मीरा ने अपनी काव्य की रचना की। आइए मीरा के जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं।

11.3 मीरा-सामान्य परिचय

मीराबाई कृष्ण के अनन्य परम भक्त थी। उन्हें 'राजस्थान की राधा' भी कहा जाता है। मीरा का जन्म सन 1498 में राजस्थान के कुड़की गाँव के एक राजपरिवार में हुआ था। उनके पिता रतन सिंह राठोड़ एक छोटे से राजपूत रियासत के शासक थे। मीराबाई अपनी माता-पिता के इकलौती संतान थी। मीराबाई जब दो वर्ष की थी, उनकी माँ का देहांत हो गया था। इसलिए मीरा के दादा दूदा राव ने उन्हें मेड़ता लाया और अपनी देखरेख में उनका पालन पोषण करने

लगा। मीरा का पालन पोषण उनकी दादा-दादी ने ही किया। उनकी दादी भगवान श्रीकृष्ण के परम भक्त थे, जो ईश्वर में अत्यंत विश्वास रखनेवली औरत थी। मीरा अपनी दादीमाँ की कृष्ण भक्ति को देखकर बहुत ही प्रभावित हुए थे। एक दिन जब एक बारात दूल्हे सहित जा रहा था तब बालिका मीरा ने उस दूल्हे को देखकर अपनी दादी से अपने दूल्हे के बारे में पूछी तो, दादी ने तुरंत ही गिरधर गोपाल का नाम बता दिया और उसी दिन से मीरा ने गिरधर गोपाल को अपना वर मान लिया।

मीरा का विवाह राणा सांगा के पुत्र और मेवाड़ के राजकुमार भोजराज के साथ सन् 1516 में संपन्न हुआ। उनके पति भोजराज दिल्ली सल्तनत के शासकों के साथ एक संघर्ष करते हुए सन् 1518 में घायल हो गए और इसी कारण सन् 1521 में उनकी मृत्यु हो गयी। पति के मृत्यु की कुछ वर्षों के अन्दर ही उनके पिता और ससुर भी मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर के साथ युद्ध में मारे गए।



महत्वपूर्ण बिंदु

- मीराबाई का असली नाम जसोदा रॉव रतन सिंह राठौर है। मीरा मूलत: रहस्यवादी कवयित्री थी। भारतीय भक्ति आंदोलन की संत गायिकाओं में से मीरा का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है, जिनके भजन पुरे देश में प्रार्थना की तरह लोग गाते हैं। जिनकी कृष्ण भक्ति से संबंधित जीवन और मृत्यु आज भी एक किंवदंती और अविश्वसनीय कहानी बनी हुई है।

कहा जाता है कि उस समय की प्रचलित प्रथा के अनुसार भोज के मृत्यु के बाद मीरा को उनके पति के साथ जिंदा अपने प्राणों की आहुति देने की एक प्रथा प्रचलित थी लेकिन मीरा इसके लिए तैयार नहीं हुईं। धीरे-धीरे मीरा को संसार से विरक्ति होने लगी और साधु-संतों की संगति में कीर्तन करते हुए अपना समय व्यतीत करना उचित प्रतीत हुआ। मीराबाई का साधु-संतों के साथ उठने-बैठने व भजन गाने का कार्य, उनके देवर विक्रमसिंह (विक्रमादित्य) को पसंद नहीं आया था। उन्होंने मीरा को समझाया, परंतु मीरा ने किसी की नहीं सुनी और कृष्ण भक्ति में ही लीन हो गया। विक्रमादित्य ने मीरा को कृष्ण-भक्ति से रोकने के लिए अनेकों चेष्टा की। महत्वपूर्ण हैं कि उन्होंने मीरा को जहर देने तथा सर्प से कटवाने का भी प्रयत्न किया था। स्वयं मीरा के पद इसका प्रमाण है-

'राणा जी थे जहर दियो म्हे जाणी
या साँप पिटारा राणा भेज्या।'

ऐसा माना जाता है कि सन् 1533 के आसपास मीरा को 'राव बीरमदेव' ने मेड़ता बुला लिया और चित्तौड़ त्यागने की अगले साल ही सन् 1534 में गुजरात के बहादुरशाह ने चित्तौड़ पर कब्ज़ा कर लिया। इस युद्ध में चितौड़ के शासक विक्रमादित्य मारे गए तथा सैकड़ों महिलाओं ने जौहर किया। इसके पश्चात सन् 1538 में जोधपुर के शासक राव मालदेव ने मेड़ता पर अधिकार

कर लिया जिसके बाद बीरमदेव भागकर अजमेर की शरण ली और मीराबाई ब्रज की तीर्थ यात्रा पर निकल पड़ीं। सन् 1539 में मीराबाई वृंदावन में रूप गोस्वामी से मिले। वहाँ कुछ साल निवास करने के बाद मीराबाई सन् 1546 के आस-पास द्वारका चली गईं। कहा जाता है कि सन् 1547 में द्वारका में ही मीरा कृष्ण भक्ति करते-करते श्री कृष्ण जी की मूर्ति में समा गई।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. राजस्थान की राधा किसको कहा जाता है?

प्रश्न 2. मीरा की मृत्यु को लेकर कौनसा प्रवाद प्रचलित है?

प्रमुख रचनाएँ-

राग गोविंद
गीत गोविंद
नरसी जी का मायरा
मीरा पद्मावली
राग सोरठा
गोविंद टीका

11.4 मीरा की पदावली (मूल पाठ)

मेरे तो गिरिधर गोपाल, दूसरों न कोई
जा के सिर मोर-मुकुट, मेरो पति सोई
छाँड़ि दयी कुल की कानि, कहा करि हैं कोई?
संतन ढ्ग बैठि-बेठि, लोक-लाज खोयी
असुवन जल सींचि-सींचि, प्रेम-बलि बोयी
अब त बेलि फॅलि गायी, आणंद-फल होयी
दूध की मथनियाँ बड़े प्रेम से विलायी
दधि मथि घृत काढ़ि लियों, डारि दयी छोयी
भगत देखि राजी हुयी, जगत देखि रोयी
दासि मीरां लाल गिरधर! तारो अब मोही ।

शब्दार्थ : गिरधर-पर्वत को धारण करने वाला अर्थात कृष्ण, **सोई**-वही, **जा के**-जिसके, **छाँड़ि दयी**-छोड़ दी, **कुल की कानि**-परिवार की मर्यादा, **करिहै**-करेगा, **ढिग**-पास, **असुवन**-आँसू, **सींचि**-सींचकर, **मथनियाँ**-मथानी, **काढ़ि लियो**-निकाल लिया, **डारि दयी**-डाल दी, **छोयी**-छाछ

11.5 पाठ का सारांश

प्रस्तुत अध्याय में स्वामी कृष्ण की महिमा का वर्णन किया गया है। कृष्ण प्रेम में दीवानी मीरा ने कृष्ण को अपना सर्वस्व मानकर स्वयं को उनमें समर्पित कर दिया था। मीरा कहती है कि मेरे तो आराध्य गिरधर गोपाल है। अर्थात् उनके लिए तो श्री कृष्ण ही मूल है, वही सब कुछ हैं। दूसरों से उनका कोई संबंध नहीं है। जो अपने सर पर मोर का मुकुट पहने हुए हो, वही श्रीकृष्ण उनका पति है। कहने का तात्पर्य यह है कि मीरा श्री कृष्ण को अपना स्वामी मान चुकीं थी। कृष्ण के प्रेम में उन्होंने परिवार की मर्यादा को भी छोड़ दिया था। उन्हें अब किसी की परवाह नहीं थी। मीरा संतों के बीच कृष्ण के प्रेम में नाचती, गाती नजर आती थी। उन्होंने अपना लोक लज्जा खो दिया था।

उल्लेखनीय है कि मीरा ने अपने आँसुओं के जल सींच-सींचकर प्रेम की बेल बोई है। अब यह बेल फैल गई है और इस पर आनंद रूपी फल लगने लगे हैं। मीरा कहती है कि उन्होंने कृष्ण के प्रेम रूपी दूध को भक्ति रूपी मथानी में बड़े प्रेम से बिलोया है। उन्होंने दही से सार तत्व अर्थात् घी को निकाल लिया और छाछ रूपी सारहीन अंश को छोड़ दिया है।

मीरा प्रभु के भक्तों को देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं और संसार के लोगों को मोह-माया में लिप्त देखकर रोने लगते हैं। स्वयं को गिरधर की दासी बताती है और अपने उद्धार के लिए प्रार्थना करती है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. छाँड़ि दयी का क्या अर्थ है?

प्रश्न 4. मीरा स्वयं को किसका दासी मानती है?



11.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- मीराबाई की भक्ति में आत्मसमर्पण की भावना है
- भगवन कृष्ण ही उनके लिए सबकुछ है
- वियोग की भावना उनके पद में तीव्र रूप से उभरकर आया है



11.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : मीरा को कहा जाता है।

प्रश्न 2 का उत्तर : पाने के लिए अध्ययन कीजिये 'मीरा-सामान्य परिचय के कथ्य को।'

प्रश्न 3 का उत्तर : छोड़ देना।

प्रश्न 4 का उत्तर : जानने के लिए पाठ का सारांश अध्ययन कीजिए।



11.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. मीराबाई की सम्पूर्ण पदावली, संपा.- रामकिशोर शर्मा, लोकभारती प्रकाशन।



11.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. मीरा के पिता कौन थे ?
2. बिक्रमादित्य किसका नाम है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. विरहिणी मीरा का सामान्य परिचय दीजिए।
2. प्रस्तुत कविता में निहित संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
3. मीरा की दृष्टि में गिरिधर गोपाल कौन है और उनका स्वरूप कैसा है ?
4. व्याख्या कीजिए-

दूध की मथनियाँ बड़े प्रेम से विलायी
दधि मथि घृत काढ़ि लियों, डारि दयी छोयी
भगत देखि राजी हुयी, जगत देखि रोयी
दासि मीरां लाल गिरधर ! तारो अब मोही।

*** ***** ***

इकाई 12 : मीराबाई (पदावली)-2

इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 मीरा की भक्ति-भावना

12.4 मीरा की पदावली (मूल पाठ)

12.5 पाठ का सारांश

12.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

12.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

12.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

12.9 अभ्यास प्रश्न

12.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जानेंगे-

- हिंदी भक्ति साहित्य में मीराबाई का स्थान तथा योगदान के बारे में
- मीराबाई की भक्ति-भावना के बारे में
- मीराबाई के संकलित पद में निहित संवेदना और महत्व के बारे में।

12.2 प्रस्तावना

कृष्ण काव्यधारा के लोकप्रिय कवयित्री मीरा का स्थान हिंदी साहित्य जगत में अत्यंत महत्वपूर्ण है। कृष्ण के प्रति अथाह प्रेम, तत्कालीन सामाजिक रूढ़ियाँ, महिला होने के बावजूद मंदिर, मठ आदि में कृष्ण लीलाओं का गान करते हुए घूमते फिरते रहना तथा साहित्य करना अपने-आप में एक मिशाल के रूप में मीरा लोगों के सामने आती है। जिसका जिक्र भी उन्होंने खुद अपने पद में की है। मीरा की कविता कृष्ण भक्ति के रंग भरकर और अधिक गहरी हो जाती है, जिसे सुनकर या पढ़कर लोगों के मन आनंद से भर आता है। अब मीरा की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालते हैं-

12.3 मीराबाई की भक्ति-भावना

मीराबाई भक्तिकाल के सगुण भक्तिधारा की प्रमुख कवयित्री एवं कृष्ण की अनन्य उपासिका थी। पति की मृत्यु के बाद इस प्रकार मीरा कृष्ण भक्ति में लीन हो गई कि उन्होंने कृष्ण को अपना सबकुछ मान लिया था। असल में मीरा बचपन से ही कृष्ण के

अनन्य भक्त एवं दासी थी। साधू संतों के साथ बैठना, भजन करना, नृत्य करना आदि में मीरा की अत्यधिक रूचि थी।

मीरा की भक्ति में नजर आनेवाली मूल रसों में से 'माधुर्य' रस को सबसे प्रथम स्थान मिला है। मीरा ने श्रृंगार के दोनों पक्ष संयोग और वियोग का सुन्दर एवं आकर्षक वर्णन किया हैं। मगर संयोग की अपेक्षा उनके पदों में वियोग का अधिक मार्मिक वर्णन हुआ है। वस्तुत: मीरा एक विरहिणी थी। इसी कारण उनकी भक्ति में विरह की ही प्रमुखता अधिक दिखाई पड़ती है। उनके स्वामी परमपिता श्रीकृष्ण लोगों के उद्धारक, संहारक और पालनकर्ता है।

मीरा की भक्ति में दार्शनिकता की पुट स्पष्ट रूप से नजर आती है। कृष्ण प्रेम में अनुरक्ता मीरा हमेशा कृष्ण भक्ति के लिए व्याकुल रहती थी। अपने हृदय में उस प्रियतम कृष्ण के लिए अथाह प्रेम और मिलन की तीव्र आकांशा रखने वाली मीरा की भक्ति संबंधी पद उसी का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनकी भक्ति में समर्पण की भावना प्रचुरता से नजर आती है। परमात्मा से मिलने के लिए आकुल मीरा खुद को उन्हीं के लिए, उन्हीं के शरण में समर्पित कर देती है। उनके पद; समर्पण का अद्भुत दृष्टांत है। मीरा की भक्ति में रहस्यवादी भावना दिखाई पड़ती है। वे हमेशा उस रहस्यमयी सत्ता को जानकार उसी के लिए आतुर हुआ करती थी। वस्तुत: मीरा की भक्ति में प्रेम की उन्मादना प्रमुख रूप से नजर आती है। पागलों की तरह कृष्ण प्रेम रंगी हुई, मीरा उनसे मिलने के लिए व्याकुल हो उठते थे, प्रभु कृष्ण से मिलन की आश लगाये बैठे रहते थे। मिलन की तीव्र उत्कंठा, व्याकुलता और तड़पन ही मीरा जैसी विरहिणी को महान बनाती है।

मीरा की भक्ति आकुलता है। हृदय की आकुलता इस कदर बढ़ जाती है कि जिसे देखकर लोग मीरा को पागल तक कह देते थे। मीरा हमेशा अपने प्रियतम के दर्शन के लिए लालायित रहती थी। उत्कंठा का बढ़ाव यहाँ तक था कि मीरा अपने भवन पर खड़ी होकर निरंतर महल की ओर आनेवाली पथ को निहारती रहती थी। मीरा की भाषा में -

'कब कि ठाढ़ी पंथ निहारु अपने भवन खड़ी।'

मीरा कहती है, जिस प्रकार चातक पक्षी वर्षा ऋतु के बादल के बिना व्याकुल रहते हैं और मछली पानी के बिना तड़पती रहती हैं उसी प्रकार मीरा भी विरह से व्याकुल होकर सुध-बुध खो बैठी है -

'ज्यों चातक घन को रहे मचली जिमि पानी हो,
मीरा व्याकुल विरहिणी सुध बुध बिसरानी हो।'

मीरा की भक्ति से ओत-प्रोत साहित्य भक्तों का मार्ग दर्शन करता है। मीरा के काव्य में सांसारिक बंधनों का त्याग एवं ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव नजर आता है। उनकी दृष्टि में सुख, वैभव सम्मान आदि सब मिथ्या है। यदि कोई सत्य है तो वह है गिरिधर गोपाल। कृष्ण को वे परमात्मा और अविनाशी मानते थे। उनकी भक्ति में ढोंग, आडम्बर, मिथ्या और कृतिमता नहीं दिखाई देती हैं। उनकी भक्ति में ज्ञान से ज्यादा भक्ति

और समर्पण को अधिक महत्व दिया गया है। अपने सरल और निश्छल प्रेम की अभिव्यक्ति में मीरा अद्वितीय है। उनका समस्त काव्य कृष्ण भक्ति से संबंधित और उन्हीं पर समर्पित हैं। अपनी भावनाओं को तथा प्रेम की छटपटाहट को मीरा ने अपने शब्दों से उकेड़ा है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. मीरा की भक्ति का स्वरूप कैसा है?

प्रश्न 2. मीरा किसके प्रेम में दीवानी है?

प्रश्न 3. मीरा सगुण-भक्ति धारा के किस शाखा को प्रतिनिधित्व करती है?

12.4 मीरा की पदावली (मूल पाठ)

मन रे परसी हरी के चरण।
सुभाग शीतल कमल कोमल।
त्रिविध ज्वालाहरण।
जिन चरण ध्रुव अटल किन्ही रख अपनी शरण।
जिन चरण ब्रह्माण भेद्यो नख शिखा सिर धरण।
जिन चरण प्रभु परसी लीन्हे करी गौतम करण।
जिन चरण फनी नाग नाथ्यो गोप लीला करण।
जिन चरण गोबर्धन धर्यो गर्व माधव हरण।
दासी मीरा लाल गिरीधर आगम तारण तारण।
मीरा मगन भाई।
लिसतें तो मीरा मगनभाई।।

12. 5 पाठ का सारांश

प्रस्तुत पद में मीराबाई ने अपने आराध्य कृष्ण के चरण की महिमा का बखान किया है। भगवान् कृष्ण के जिन चरण की सेवा मीरा करती आयी है, उन्होंने न जाने कितनों का उद्धार कर लिया हैं। कृष्ण के प्रेम में बावली श्याम दीवानी मीराबाई अपनी भक्ति को आराध्य के प्रति समर्पित कर कहती है, कि अब इस सांसारिक मोह माया से मेरा मन बिल्कुल उब गया है। मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। इसी कारण मीरा ने सभी मोह-माया को पीछे छोड़कर केवल कृष्ण-भक्ति का मार्ग चुन लिया है। मीरा कहती है- मेरे प्रभु कुंज बिहारी का मन बहुत ही कोमल, दयालु और शीतल है, जिनके चारों तरफ ध्रुव स्थित हैं। जो पृथ्वी सहित पूरे ब्रह्मांड के नियंत्रा हैं, तथा स्वयं शेषनाग भगवान जिनके चरण में स्थित हैं ऐसे परम ब्रह्म

तेजस्वी जिन्होंने भक्तों की रक्षा के लिए गोवर्धन पर्वत को धारण किया था। मैं प्रभु की दासी हूँ। असल में कवयित्री मीरा कृष्ण प्रेम में इस कदर लीन हो गई कि उनके अलावा मीरा को कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता।



12.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- मीरा कृष्ण की अनन्य भक्त थी।
- उनके पदों का मूल स्वर कृष्ण प्रेम है।
- जीवन के मूल तत्व को समझते हुए मीरा ने सांसारिक माया-मोह के बंधनों को त्याग दिया है।



12.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : जानने के लिए मीरा की भक्ति भावना के कथ्य को पढ़िए।

प्रश्न 2 का उत्तर : मीरा अपने आराध्य कृष्ण के प्रेम में पागल है।

प्रश्न 3 का उत्तर : सगुण भक्ति धारा अंतर्गत कृष्ण भक्ति काव्यधारा का प्रतिनिधित्व करती है।



12.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. मीराबाई की सम्पूर्ण पदावली, संपा.- रामकिशोर शर्मा, लोकभारती प्रकाशन।



12.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. मीरा किस काव्यधारा से है ?
2. मीरा के पदों का मूल स्वर क्या है ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. मीराबाई का जन्म कब और कहाँ हुआ और उनके भक्ति भावना पर किसका प्रभाव अधिक रहा है ?
2. मीराबाई भक्तिकाल के किस काव्यधारा में आती है तथा उनके कृष्ण का स्वरूप क्या है- स्पष्ट कीजिए ?
3. राजस्थान की राधा किसे कहा गया है ? उनके रहस्य भावाना पर विचार कीजिए।
4. 'मन रे परसी हरी के चरण' पद के माध्यम से मीरा की अनुभूति पर चर्चा कीजिए।

*** ***** ***

इकाई 13 : जायसी-1

इकाई की रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 मलिक मोहम्मद 'जायसी' का सामान्य परिचय

13.4 नागमती, वियोगखंड (मूल पाठ)

13.5 पाठ का सारांश

13.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

13.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

13.8 अधिक जानने के लिए पढ़े

13.9 अभ्यास प्रश्न

13.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- जायसी का व्यक्तित्व एवं साहित्य साधना के सन्दर्भ में जान पाएंगे।
- जायसी के काव्य की विशेषताओं के बारे में जान पाएंगे।
- जायसी के संकलित पद को पढ़कर उनकी अनुभूति और कला पक्ष को समझ पाएंगे।

13.2 प्रस्तावना

मलिक मोहम्मद जायसी हिंदी साहित्य के भक्तिकाल की सूफी काव्यधारा के प्रमुख एवं लोकप्रिय कवि रहे हैं। उन्होंने जिस धारा में अपने काव्यों का सृजन किया, उस धारा को प्रेमाश्रयी शाखा कहा जाता है। उनके काव्य में निहित प्रेम में मूलत: भक्ति तत्व की प्रधानता है। उनके द्वारा रचित 'पद्मावत' प्रेमाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि काव्य है। जहाँ कवि ने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिकता की ओर संकेत किया है। नीचे उनके जीवन और साहित्य के बारे में चर्चा उपलब्ध हैं।

13.3 मलिक मोहम्मद 'जायसी' का सामान्य परिचय

प्रेमाश्रयी शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि मलिक मोहम्मद जायसी का जन्म उत्तर प्रदेश के अमेठी जिले के 'जायस' नामक स्थान पर हुआ था। उन्होंने स्वयं अपने जन्म के बारे में अपनी कृति 'आखिरी कलाम' में लिखा है कि

'मा अवतार मोर नव सदी।
तीस बरस उपर कवि बदी।।'

-इन पंक्तियों के आधार पर माना जाता है कि उनका जन्म 900 हिजरी यानी सन् 1492 के लगभग हुआ था।

प्रचलित है कि मलिक मुहम्मद जायसी के वंशज अशरफी खानदान के चेले थे और 'मलिक' कहलाते थे। मलिक मूल रूप से अरबी भाषा का शब्द है। अरबी में जिसका अर्थ 'स्वामी', 'सरदार' अथवा 'राजा' आदि हैं। वहीं मलिक का फारसी में अर्थ 'अमीर' और 'बड़ा व्यापारी' के संबंध में प्रयोग किया जाता है। कहा जाता है कि मलिक मोहम्मद जायसी बाल्यावस्था से ही अनाथ थे। बाद में उनका जीवन साधु और फकीरों के सानिध्य में आया और ऐसे ही जीवन बीतने लगा। उन्होंने 'सैयद अशरफ जहाँगीर' और 'शेख बुरहान' को अपने गुरु के रूप में उल्लेख किया हैं। मलिक मुहम्मद जायसी की जिन-जिन रचनाओं का उल्लेख मिलता हैं, वह निम्न प्रकार हैं-

पद्मावत
अखरावट
सखरावत
चंपावत
इतरावत
मटकावत
चित्रावत
सुर्वानामा
मोराईनामा
मुकहरानामा
मुखरानामा
पोस्तीनामा
होलीनामा
आखिरी कलाम
धनावत
सोरठ
जपजी
मैनावत
मेखरावटनामा
कहरानामा
स्फुट कवितायें

लहतावत

सकरानामा

मसला या मसलानामा

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'काजी नसरुद्दीन हुसैन जायसी' के हवाले से बताया है कि जायसी की मृत्यु 949 हिजरी यानी 1542 ईस्वी को अमेठी में हुई थी। वहाँ उनकी कब्र है।



महत्वपूर्ण बिंदु

- पद्मावत, अखरावट और आखिरी कलाम जायसी की प्रसिद्धि का मूल आधार है। उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रेम का अत्यंत ऊँचा आदर्श प्रस्तुत किया। उन्हें रहस्यमयी सत्ता के प्रति पूर्ण विश्वास था और उनके रहस्यवाद मूलत: भारतीय और सूफी दर्शन का समन्वय हैं ।

13.4 नागमती वियोग-खंड (मूल पाठ)

कहा मानसर चढ़ा सो पाई।
पारस रूप इहाँ लगि आई।
भा निरमर तेन्ह पायन परसें।
पावा रूप रूप कें दरसें।
मलै समीर बास तन आई।
भा सीतल गै तपनि बुझाई।
न जनोंकौनु पौन लै आया।
पुन्नि दसा भै पाप गँवावा।
ततखन हार बेगि उतिराना।
पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना
बिगसे कुमुद देखि ससि रेखा।
भै तेहिं रूप जहाँ जो देखा।
पाए रूप रूप जस चहे।
ससि मुख सब दरपन होइ रहे।
नैन जो देखे कँवल भए निरमर नीर सरीर।
हँसत जो देखे हंस भए दसन जोति नग हीर।

शब्दार्थ : तेन्ह-उसके, ततखन-उसी क्षण, बिगसे-विकसित होना, खिलना, उतिराना-ऊपर उठकर आना, बेगि-तेजी से

13.5 पाठ का सारांश

प्रस्तुत पंक्तियों में पद्मावती के रूप-सौंदर्य का वर्णन हुआ है। मानसरोवर में स्नान के लिए गई पद्मावती के स्पर्श को पाकर मानो वह खिल उठा है। मानसरोवर ने जो इच्छा की थी, वह आज पूर्ण हो गया है।

मानसरोवर के शब्दों में- रूप की पारस पद्मावती सरोवर के समीप आ गई है। उसके चरण छूकर मैं निर्मल हो गया, उसके रूप का दर्शन करके मैंने भी अपना नवरूप पा लिया। उसके शरीर से मलय वायु की सुगन्ध मुझे मिली, जिससे मैं शीतल हो गया। मेरी जलन समाप्त हुई और मैं सुगन्धित हुआ। न जाने वह कौन है जो इतनी सुगन्धित और शीतल पवन लेकर आया है, जिससे मेरी जलन समाप्त हो गयी और जिसके स्पर्श मात्र से सारे पाप नष्ट होकर मैं पवित्र हो गया।

उसी क्षण जो हार स्नान करते वक्त सरोवर में खो गया था, वह ऊपर आने लगा जिसे देखकर पद्मावती प्रफुल्लित होकर हसने लगी। उनका विहसित होना कोई सामान्य बात नहीं थी, मानो चारों तरफ चन्द्रमा की किरणे फैल रही हो। चन्द्रमा की उन किरणों को देखकर कुमुदिनी रूपी सखियाँ भी खिलने लगी। जहाँ जिसने भी उसे देखा, उसी के रूप का हो गया। जिसको जैसा रूप चाहिए था, सभी को वैसा ही रूप मिला। शशि मुख रूपी पद्मावती के लिए सब पदार्थ दर्पण सा बन गया।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. 'निर्मल' से क्या तात्पर्य है?

प्रश्न 2. सूफी मत में पूरी प्रकृति को किसका प्रतिबिंब माना गया है- प्रस्तुत इकाई के आधार पर स्पष्ट कीजिए?

उसके नेत्र को जिसने भी देखा वह कमल बन गया। उसकी शरीर की छाया से जल निर्मल हो गया है। हँसों के रूप भी पद्मावती से मिला हुआ है, उसे हँसते हुए जिसने देखा, वह हंस हो गया। उसकी दन्त पंक्तियों की ज्योति से ही हीरा नग बन गया। इन सभी ने पद्मावती के रूप को धारण किया है।

सूफीमत में यह मान्यता है कि यह पूरी प्रकृति उस परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। सम्पूर्ण सृष्टि उसके प्रकाश से प्रकाशित है। कुछ सूफियों के अनुसार जिस प्रकार सूर्य की रश्मियाँ सूर्य से निकलती है, फिर भी सूर्य ज्यों का त्यों बना रहता है, परमात्मा और संसार का सम्बन्ध भी ठीक उसी प्रकार का है। बहुत सारे सूफी ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि यह सृष्टि दर्पण के समान है, जिसमें परमात्मा के गुण प्रतिबिम्बित होते हैं। यहाँ पद्मावती रुपी परमात्मा के प्रतिबिम्ब से पूरी प्रकृति प्रकाशित हो गयी है, सभी को उसी का रूप मिला हुआ है। कमल, हँस, चन्द्रमा नक्षत्र

सभी उसके रूप से रूपवान हैं। इनमें जो रूप दिखाई दे रहा है वह उसी परमात्मा रूपी पद्मावती का ही अंश है।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3. उल्लेखित पंक्तियों के माध्यम से पद्मावती के रूप सौंदर्य का वर्णन कीजिए ?



13.6 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- मलिक मुहम्मद जायसी भक्ति कालीन निर्गुण भक्ति धारा की प्रेमाश्रयी काव्य शाखा के अद्वितीय कवि है। तत्कालीन हिन्दू-मुसलमानों के बीच व्याप्त विभेद को वे अपने साहित्य के माध्यम से ख़त्म करना चाहते थे।
- उनकी कविताओं का मूल स्वर प्रेम है, भारतीय प्रचलित लोककथा को जायसी ने अपने प्रेमकथा का आधार बनाया।
- जायसी ने अपनी कविताओं में मूलतः श्रृंगार रस के वियोग पक्ष को प्रधानता दी है।



13.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : स्वच्छ, साफ, परिस्कार, विशुद्ध।

प्रश्न 2 का उत्तर : पाने के लिए अध्ययन करे पाठ के सारांश का।

प्रश्न 3 का उत्तर : पाने के लिए प्रस्तुत इकाई का विस्तृत अध्ययन कीजिए।



13.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. पाण्डेय, सुधाकर, मालिक मुहम्मद जायसी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
2. जायसी ग्रंथावली, (सं.) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, भारतीय ज्ञानपीठ।



13.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. जायसी किस शाखा के प्रतिनिधि कवि है ?
2. जायसी का रहस्यवाद मूलत किन दो धाराओं की मिश्रित रूप हैं ?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. मलिक मुहम्मद 'जायसी' का जन्म कहाँ हुआ था उनकी कविताओं की क्या विशेषता रही हैं ?
2. जायसी द्वारा रचित सर्वश्रेष्ठ कृति कौनसी है ? उस पर एक आलेख प्रस्तुत कीजिए।
3. उल्लेखित कविता के आधार पर जायसी के काव्य-संवेदनाओं को स्पष्ट कीजिए।

*** ***** ***

इकाई 14 : जायसी-2

इकाई की रूपरेखा

14.1 उद्देश्य
14.2 प्रस्तावना
14.3 जायसी के विरह वर्णन की विशेषता
14.4 नागमती वियोग-खंड (मूल पाठ)
14.5 उल्लेखित पंक्तियों का भावार्थ
14.6 इस अध्याय से हमनें सीखा
14.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
14.8 अधिक जानने के लिए पढ़े
14.9 सारांश

14.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप -

- जायसी के विरह वर्णन की विशेषताओं से परिचय प्राप्त करेंगे
- जायसी के काव्य को पढ़कर आनंद ले सकेंगे
- उल्लेखित पंत्तियों की संवेदना से परिचित हो पाएंगे।

14.2 प्रस्तावना

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने नागमती के विरह वर्णन को हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि घोषित किया है। इस विरह वर्णन ने आचार्य रामचंद्र शुक्ल को इतना प्रभावित किया कि उन्होंने जायसी को अपनी त्रिवेणी में स्थान दिया। वस्तुत: 'पद्मावत' अध्ययन के उपरान्त पाठक के मन पर रत्नसेन, नागमती और पद्मावती के प्रेम एवं उनके विरह के अतिरिक्त और कोई प्रभाव शेष नहीं रहता है। यह प्रेम की अनन्यता ही है। जिसने रत्नसेन को राजसिहांसन से उतारकर भिखारी बना दिया था। तोते के मुख से पद्मावती के सौन्दर्य के बारे में सुनकर ही रतनसेन के मन में वह प्रेम उत्पन्न हुआ, जो उसे सिंहलद्वीप तक ले गया था। गुणकथन, स्वप्नदर्शन या चित्रदर्शन द्वारा प्रेम का उदय होना, हिन्दी काव्य की पुरानी परिपाटी रही है। पद्मावत में जायसी ने भी गुणकथन के द्वारा रत्नसेन के हृदय में पद्मावती के प्रति प्रेम का उद्भव होते दिखाया गया है। पद्मावती के प्रेम में पागल रत्नसेन देश-देश की खाक छानता हुआ, मार्ग के संकटों का सामना करता हुआ अंतत: पद्मावती के देश सिंहलद्वीप तक पहुँच जाता है। यह रत्नसेन के प्रेम की चरम परिणति है, जहाँ उसके लिए पद्मावती के सिवा जीवन में और कोई पक्ष नहीं बचता। नीचे जायसी के विरह वर्णन की विशेषताओं पर आलोचना प्रस्तुत हैं।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. त्रिवेणी में आचार्य शुक्ल ने जायसी के अलावा शेष किनके बारे में समालोचनात्मक प्रबंधों की भूमिका के विशिष्ट अंशों में संकलन किया है?

14.3 जायसी के विरह वर्णन की विशेषताएँ

नागमती का विरह-वर्णन 'पद्मावत' की प्रसिद्धि का आधार है। यह विरह-वर्णन विरही के मन का यथार्थ उद्घाटन करता है। यहाँ विरह-वेदना उपरी स्तर पर नहीं, बल्कि गहराई से मन को छूती नज़र आती है। नागमती के विरह-वर्णन की प्रशंसा हिन्दी साहित्य में खूब हुई हैं। इस विरह-वर्णन में प्रेम-आँसू, मनुष्य-प्रकृति, कल्पना-यथार्थ सब आपस में घुल-मिल गए हैं। विरह-व्यथा की तीव्रता इतनी हैं कि काल्पनिक लगने वाली बातें यथार्थ लगने लगता है। सामान्य तौर पर मनुष्य पशु-पक्षी से बात नहीं कर सकता, पर विरह में सब कुछ संभव है। नागमती भौंरे, कौवे से सहानुभूति पाने की आशा करते हुए कहती है-

'पिय सौं कहेहु सँदेसरा हे भौंरा! हे काग!!
सो धनि बिरहै जरि मुइ तेहिक धुवाँ हम्ह लाग।।'

नागमती प्रेम की पीर में इस कदर डूबी हुई है कि वह भौंरे, कौवे से बातें करने लगती हैं। विरह-दशा में नागमती भूल ही जाती हैं कि वे रानी है। वे अपने-आपको साधारण स्त्री के रूप में देखती हैं। नागमती का वियोग एक साधारण नारी का वियोग है। इस वियोग में दरबारी दर्द नहीं है। पति को नागमती घर में न पाकर नागमती चिंता में है कि घर कैसे चलेगा। पुष्य नक्षत्र सिर उपर आ गया है। मैं बिना स्वामी के हुँ।

'पुष्प नखत सिर ऊपर आवा।
हौं बिनु नाह मंदिर को छावा?'

नागमती के विरहोद्वेक को इस तरह दिखाकर जायसी ने भावुकता का परिचय दिया है। इस बात के लिए शुक्ल जी ने जायसी की खूब प्रशंसा की है। जहाँ तक भावुकता का प्रश्न है, विरह में नागमती द्वारा ऐसा सोचा जाना स्वाभाविक है। उधेड़बुन तब शुरू होती है जब नागमती को 'पद्मावत' में एक रानी के रूप में पाते हैं। एक रानी को भला घर छाये जाने की चिंता क्यों होगी? जायसी ने रानी नागमती को विरह में साधारण स्त्री के रूप में क्यों चित्रित किया है? किसी रानी को दर्द नहीं होता क्या? फिर उसे एक साधारण नारी बनाने की क्या आवश्यकता थी? ऐसी कौन-सी मजबूरी है कि हिन्दी काव्य-परंपरा में विरह-वर्णन विरही को साधारण पात्र बनाकर ही सामने क्यों लाए जाते हैं?

जायसी ने नागमती को साधारण नारी के रूप में चित्रित कर उसके वियोग को

गाढ़ा और लोकव्यापी बनाया है। नागमती के विरह-वर्णन अंतर्मन को इसलिए छूता है कि वह रानी होते हुए भी अपने-आपको साधारण नारी के रूप में देखती है। काव्य-जगत में ऐसा करने की परंपरा रही है तो इसके पीछे दो कारण हो सकते हैं-

(i) वे सामान्य जनता की सहानुभूति का पात्र बने।

(ii) कथा लोकव्यापी हो।

नागमती रानी होते हुए हाय-तौबा मचाती तो वह पाठकों की सहानुभूति उतनी नहीं बटोरती जितनी कि वह साधारण नारी के रूप में ऐसा करने में सफल हुई है। जायसी दरबार के लिए नहीं, सामान्य जनता के लिए लिख रहे थे, इसलिए उन्होंने सामान्य जनता की संवेदना को प्रमुखता दी है। जायसी का अनुभव लोक सामान्य वर्ग का है। इसलिए उनकी वर्गीय चेतना उन पर हावी हो गई हैं। जायसी लोक-कथा के सहारे 'पद्मावत' लिखे हैं। नागमती लोक-कथा की रानी है, किसी दरबार की नहीं। लोक-कथा में राजा-रानी केवल मात्र एक प्रतीक होते हैं, उनका व्यवहार जनता की तरह होता है। जायसी जहाँ दरबारी संस्कार मसलन घोड़े गिनाना, भोजनों के नाना प्रकार आदि का वर्णन करते हैं, वहाँ वे सिर्फ़ वर्णन करके रह जाते हैं, कोई मार्मिकता नहीं पैदा कर पाते।

सच्चा वियोग वही हो सकता है जिसमें मनुष्य सिर्फ़ मनुष्य बचता है, सारी भौतिकताएँ पीछे छूट जाती हैं। वियोग में नागमती अगर रानी बनी रहती तो निश्चित रूप से उसे रत्नसेन के अतिरिक्त अपने रानीपन से भी प्यार होतो। वियोग में अगर कोई रानी साधारण नारी की तरह व्यवहार करती है तो उसका मूल कारण है- प्रेम के प्रति पूर्ण समर्पण। सुख भौतिक दशा नहीं, मानसिक दशा होती है। जो मानसिक रूप से दु:खी है, उसे दरबारी सुख, रानीपन कैसे भाएगा? जायसी मानव-मन का सजीव चित्रण करने वाले कवि हैं, इसलिए विरह-दशा में उन्होंने नागमती को साधारण नारी के रूप में चित्रित किया है। सुख में मनुष्य गर्व महसूस करता है, एक साधारण तबके के प्रेमी-प्रेमिका भी अपने-आपको राजा-रानी समझते हैं, पर वियोग की आँच में सारी भौतिक ऊँचाई हवा हो जाती है। आँसू के सिवाई कुछ नहीं बचता है। नागमती के दर्द में पूरी प्रकृति रोती जान पड़ती हैं-

'कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई।
रक्त आँसु घुंघुची बन बोई।।'

नागमती की आँखों से आँसू नहीं, खून टपक रहे हैं। भौतिक धरातल पर यह बात अस्वाभाविक है। दु:ख का पारावार कुछ ऐसा है जिसमें पूरी पृथ्वी समाई हुई दिखती है। वर्षा होना एक प्राकृतिक घटना है। नागमती वर्षा की बूँदों की तुलना आँसू से करने लगती हैं-

'बरसै मघा झकोरी झकोरी।
मोर दुइ नैन चुवै जस ओरी।।'

एक विरही एक नितांत प्राकृतिक घटना को भी अपने अनुकूल किस कदर ढाल लेता है, इसका यह सुन्दर उदाहरण है। जायसी ने नागमती के विरह-वर्णन में प्रकृति को साथ लेकर चली है। मेघ श्याम हो गया है, राहु-केतु काला पड़ गया है, पलाश के फूल दहकते अंगारे-सी बन गयी है, यह सब सत्य है। पर जायसी इसका कारण विरह-ताप बताते हैं। एक कवि अपनी रचनात्मकता की गहरी अनुभूति के सहारे प्राकृतिक सत्य को अपनी रचना के अनुकूल ढाल लेता है तथा मनुष्य के सुख-दु:ख से जोड़कर उसका सजीव चित्रित करता है। विरह-दशा में सुखदायक वस्तुएँ भी दु:खदायक हो जाती हैं। मानव-मन की यह स्वाभाविक प्रवृति है। नागमती को चाँदनी रात भी अच्छा नहीं लगता है-

'कातिक सरद चंद उजियारी।
जग सीतल हौं बिरहै जारी।।'

चाँदनी रात को देख नागमती का हृदय नहीं मचलता है। नागमती वियोग में पागल है, उसे चाँदनी रात में सौंदर्य कहाँ से दिखेगा। उसे तो रत्नसेन की याद आती है। विरह की अग्नि और भड़क उठती है। वही चाँद संयोग की अवस्था में असीम सुखदायक लगता है। इसमें दोष चाँद का नहीं, प्रेम के प्रति समर्पण का है। इस समर्पण की नींव इतनी गहरी है कि नागमती अपना रानीपन तक भूल जाती है।

जायसी ने समय मापने का पैमाना ठेठ लोक जीवन से लिया है। वे इसके लिए कोई दरबारी पैमाना भी अपना सकते थे, पर वे लोक अनुभव में सिंचित कवि हैं। अर्थात उनका सम्बन्ध लोक जीवन से लिया है। नागमती को साधारण नारी के रूप में चित्रित कर उन्होंने पद्मावत को लोक जीवन की संवेदना से जोड़ दिया है, इसलिए वे लोक में इतने प्रसिद्ध हैं।



अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 2. नागमती की आँखों से क्या टपक रहे थे?

प्रश्न 3. वर्षा की बूंदें की तुलना नागमती ने किसके साथ की है?

14.4 नागमती वियोग खंड (मूल पाठ)

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा॥
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा॥
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ॥
भएउ नरायन बाबँन करा। राज करत राजा बलि छरा॥
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू॥

मानत भोग गोपिचँद भोगी। लेइ अपसवा जलंधार जोगी॥
लेइगा कृस्नहि गरुड़ अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?
सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह॥ 1॥

पिउ बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोले 'पिउ पीऊ॥'
अधिाक काम दाधो सो रामा। हरि लेइ सुवा गएउ पिउ नामा॥
बिरह बान तस लाग न डोली। रक्त पसीज, भीजि गई चोली॥
सूखा हिया, हार भा भारी। हरे हरे प्रान तजहिं सब नारी॥
खन एक आव पेट महँ! सांसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा॥
पवन डोलावहिं सींचहिं चोला। पहर एक समुझहिं मुख बोला॥
प्रान पयान होत को राखा? को सुनाव पीतम कै भाखा?
आजि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि।
हंस जो रहा सरीर महँ, पाँख जरा, गा भागि॥ 2॥

शब्दार्थः पथ हेरा-रास्ता देखती है, बाबँन करा-वामन रूप, छरा-छला, छंदू-छलछंद, अपसवा-चल दिया, पींजर-पंजर, ठठरी।

14.5 उल्लेखित पंक्तियों का भावार्थ

नागमती 'चित्तौड़' में पथ निहारती थी। 'प्रियतम' जो गए लौट कर नहीं आए हैं। वे किसी नागरी नारी के फेर में पड़ गए हैं। उसने मोहित करके उनका चित्त मेरी ओर से हर लिया है। सुग्गा काल बनकर प्रियतम को ले गया है। हाय! प्रिय के बदले चाहे मेरा प्राण ही ले जाता। वह सुग्गा वामन रूप में नारायण बनकर आया और राज करते हुए राजा बलि को छल किया। उसने छल करके कर्ण की परीक्षा ली, अर्जुन को उसके कवच से आनंद हुआ। भोगी गोपीचन्द भोग में फँसे थे। जोगी जालन्धर नाथ उन्हें लेकर चले गए। कृष्ण को लेकर अक्रूर अदृष्ट हो गया। कठिन बिछोह में गोपियाँ कैसे जीवित रहेगी? सारस की जोड़ी में से एक को वह क्यों हर ले गया? हरना ही था तो खगी को मार क्यों नहीं गया?' विरह की ऐसी आग लगी कि युवती सूख-सूख कर पिंजर हो गई।

प्रिय के वियोग में उसका जी बावला सा हो गया। वह पपीहे की तरह 'पिउ पिउ' रटने लगी। काम उसे अधिक सताने लगा। वह सुग्गा प्रियतम के नाम से उसका प्राण ही भगा ले गया। उसे ऐसा विरह का बाण लगा कि हिलडुल भी न सकती थी। रक्त के पसीजने से शरीर की चोली भीग गई। सखी ने मन में विचार कर देखा कि मदन की सताई हुई यह बाला अब हारी हुई काँप-काँपकर प्राण छोड़ देना चाहती है। पहले श्वास पेट में आता था और फिर निकल जाता था, जिससे

वे सब निराश हो जाती थीं। सखियाँ हवा करती और चोले को जल से सींचती थीं। पहर भर में वह बाला होश में आकर मुँह से बोली—'प्राण जाना चाहता है। इसे कौन रखेगा? कौन चातक की भाषा 'पिउ' से मिलाएगा?' उसके मुँह से विरह की आह निकली। उस आह! से अग्नि उत्पन्न हुई। शरीर में जो हंस या जीव था उसके पंख जल गए। ' अत: वह बिना उड़े शरीर में ही रह गया।



14.6 इस अध्याय से हमने सीखा

- जायसी के विरह वर्णन में प्रेम की मधुरता है।
- वियोग ज्वाला में नागमती के साथ प्रकृति भी ज्वल रही हैं।
- नागमती पति के विरह् में पागल सी हो गयी थी।



14.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : सूर और तुलसी।

प्रश्न 2 और 3 का उत्तर : पाने के लिए ध्यान से पढ़िए 'जायसी के विरह वर्णन की विशेषता?' शीर्षक में दिए गए कथ्य को।



14.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. जायसी ग्रंथावली, (सं.) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, भारतीय ज्ञानपीठ।
2. पाण्डेय, सुधाकर, मालिक मुहम्मद जायसी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।



14.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों का उत्तर दीजिए-

1. नागमती और पद्मावती के बीच क्या संबंध है?
2. यहाँ 'बाबँन' का क्या अर्थ है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिखिए-

1. जायसी के वियोग वर्णन की क्या विशेषता रही है?
2. उल्लेखित पद की संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
3. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जायसी के नागमती के विरह वर्णन को हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि क्यों कहा है?
4. सप्रसंग व्याख्या कीजिए-

'नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा॥
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा॥'

*** ***** ***